Con. 3. IX.7-49
320

अंक 9
संख्या 7

सोमवार
8 अगस्त
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का प्रारूप—(जारी)
[अनुच्छेद 253, 254, 254-क और 255 पर विचार] 367–412

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 8 अगस्त सन् 1949

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में मध्याह्नतर के तीन बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का प्रारूप—*(जारी)*

अनुच्छेद 253—*(जारी)*

***अध्यक्ष:** पहले हम अनुच्छेद 254 पर विचार आरम्भ करेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, अनुच्छेद 254 पर वाद-विवाद आरम्भ करने से पहले, मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि अनुच्छेद 253 पर श्री त्यागी के संशोधन पर विचार करने की अनुमति दी जाये, क्योंकि इस पर प्रधान मंत्री बोलना चाहते हैं। यद्यपि वाद-विवाद समाप्त हो गया है, पर मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप संशोधन पर मत लेने से पूर्व प्रधान मंत्री को वक्तृता देने की अनुमति दे दें।

***अध्यक्ष:** हां, माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू।

***माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं आपकी कृपा के लिये कृतार्थ हूं कि आपने मुझे इस विषय में कुछ शब्द कहने की अनुमति दी है। इस सदन में मुश्किल से ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो इस नमक के प्रश्न पर कुछ उत्तेजना अनुभव न करता हो। इस मामले में जो आर्थिक मामले अंतर्ग्रस्त हैं, उनके अतिरिक्त एक बार हमारे राष्ट्रीय इतिहास में, हमारे स्वतंत्रता के संघर्ष में, नमक एक शक्ति का शब्द बन गया था और उससे बहुत से मानव समूह में हलचल मच गई थी और जिससे कुछ ही मासों के अन्दर देश में विचित्र क्रांति हो गई थी। अत: जब भी यह प्रश्न उठता है, तब स्वभावत: हम केवल परिस्थितियों की आवश्यकता पर ही विचार नहीं करते, वरन् हम पर उसके विगत इतिहास का भी प्रभाव पड़ता है। अत: मेरे विचार में इसी कारण किसी समय मसौदा समिति अथवा किसी समिति ने यह अनुच्छेद हमारे संविधान में रखा था। जैसा कि मैंने कहा है, हमें सबको अवश्यमेव उनके इस दृष्टिकोण से सहानुभूति होनी चाहिये। फिर भी, जब हमने इस मामले पर विचार किया, ध्यान से विचार किया—क्योंकि हम भविष्य के लिये किसी चीज का निर्माण कर रहे हैं और कोई ऐसी बात करना गलत होगा, जो भविष्य में राष्ट्रीय हित के मार्ग में आये—तब हमने अनुभव किया कि यदि हम इस खंड को इस रूप में रखेंगे, तो वह अवश्य हमारे मार्ग में रोड़ा बन जायेगा उदाहरण के लिये यह स्पष्ट है

[माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू]

कि वर्तमान रूप में यह खंड हमें विदेशी नमक पर शुल्क आरोपित करने से रोक देगा, जो कि भारत में सस्ते भाव पर भेजा जा सकता है।

अब यह सुझाव भी दिया जा सकता है कि हम विदेशी नमक को छोड़ सकते हैं और देशी नमक के विषय में उपबन्ध बना सकते हैं। तब भी, जब तक आप इस मामले पर ध्यान से विचार न करें और सब प्रकार की संभावित असंगतियों के लिए उपबन्ध न रखें, तब तक कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं। ऐसी बातें विधान द्वारा निश्चित हो सकती हैं, जिसमें आप विस्तार की बातों पर विचार कर सकते हैं और सब मामलों को स्पष्ट कर सकते हैं। पर उसको संविधान में रखना, तथा असंगत स्थिति को स्पष्ट करना, जिसमें कई संदिग्ध मामले अंतर्ग्रस्त हो सकते हैं, बहुत कठिन है। अतः हमें ऐसा प्रतीत हुआ कि इस अनुच्छेद को, उसके मौलिक रूप में, संविधान में रखना अभीष्ट नहीं है। अतः मैं श्री त्यागी के संशोधन का समर्थन करने के लिए खड़ा हुआ हूं, जो इस अनुच्छेद को हटाने के विषय में है।

क्या इस संबंध में मैं दो बातें कह सकता हूं? एक बात यह है: इस सदन के किसी सदस्य को और सदन के बाहर जनता के किसी व्यक्ति को यह जरा भी कल्पना नहीं करनी चाहिये कि यह सरकार और, मेरे ख्याल में कोई अनुवर्ती सरकार, नमक पर करारोपण करने का विचार करेगी। यह बात स्पष्ट है। दूसरी बात यह है, यदि यह सदन ऐसा चाहे, तो हम इस प्रश्न पर पृथक विधि बना सकते हैं, जिस पर संसद् विस्तार से विचार कर सकती है और सब संभावित आकस्मिकताओं का उपबन्ध कर सकती है। इसे संविधान में रखने से हमारे हाथ बंध जायेंगे और भविष्य में कठिनाइयां उत्पन्न होंगी। अतः, मुझे विश्वास है कि सदन श्री त्यागी के संशोधन को स्वीकार कर लेगा।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधन-सूची के संशोधन संख्या 2886 के निर्देश से अनुच्छेद 253 के खंड (1) को हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 253 के खंड (2) में 'Revenues of India' इन शब्दों के स्थान में 'Consolidated Fund of India' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 253 संविधान का भाग हो।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 253 संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 254

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 254 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:–

'254. (1) पटसन या पटसन से बनी हुई वस्तुओं पर निर्यात शुल्क के प्रत्येक वर्ष के शुद्ध आगम के किसी भाग को आसाम, उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल, और बिहार राज्यों को सौंपने के स्थान में उन राज्यों के राजस्व में सहायक अनुदान के रूप में प्रत्येक वर्ष में भारत की संचित निधि पर ऐसी राशियां भारित की जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति द्वारा विहित की जायें।

पटसन या पटसन से बनी वस्तुओं पर निर्यात शुल्क के स्थान में अनुदान

(2) पटसन या पटसन से बनी हुई वस्तुओं पर जब तक भारत सरकार कोई निर्यात शुल्क उद्गृहीत करती रहे अथवा इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष की समाप्ति तक, इन दोनों में से जो भी पहले हो उसके होने तक, इस प्रकार विहित राशियां भारत की संचित निधि पर भारित बनी रहेंगी।

(3) इस अनुच्छेद में 'विहित' पद का वही अर्थ है, जो इस संविधान के अनुच्छेद 251 में है।' "

श्रीमान्, पटसन और पटसन की बनी हुई चीजों के निर्यात शुल्क को बांटने के विद्यमान तरीके में इस संशोधन से एक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो जाता है। भारत शासन अधिनियम के अंतर्गत यह उपबंधित है कि कुछ प्रांतों को, जिनका इस अनुच्छेद में उल्लेख है पटसन और पटसन के बने हुए सामान के निर्यात शुल्क में से कुछ अंश प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिये, क्योंकि इस अनुच्छेद में उल्लिखित प्रांतों की अर्थ-व्यवस्था में पटसन का अत्यन्त महत्वपूर्ण वस्तु है। संशोधित अनुच्छेद में यह सुझाव है कि कुछ प्रांतों के इस दावे को समाप्त कर दिया जाये कि उन्हें पटसन या पटसन के सामान के निर्यात शुल्क में से अंश प्राप्त करने का अधिकार है। मैं कह सकता हूं कि इसका कारण बहुत सीधा है। साधारणत: सारे निर्यात और आयात शुल्क केन्द्र के लिये होते हैं और किसी प्रांत को किसी वस्तु विशेष पर आरोपित निर्यात-शुल्क में अंश मांगने का अधिकार नहीं है, चाहे वह वस्तु जैसा कि मैंने कहाई, उस प्रांत की अर्थ व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण वस्तु हो। किन्तु यह देखते हुए कि विशेषत: बंगाल की वित्तीय स्थिति निर्यात शुल्क में भाग मिले बिना संतुलित नहीं हो सकती। भारत शासन अधिनियम, 1935 में एक अपवाद रखा गया था, जिससे कि बंगाल सरकार और अन्य सरकारों को मानो निर्यात शुल्क का अंश प्राप्त करने का निहित अधिकार दे दिया गया था, जो कि जैसा मैंने कहा है, इस व्यापक सिद्धान्त के विरुद्ध है कि निर्यात और आयात शुल्क केन्द्रीय सरकार के लिये ही होते हैं। अब यह अनुभव किया जाता है कि भारत शासन अधिनियम 1935 में ये जो अपवाद रखा गया था, उसे आगे जारी नहीं रहने देना चाहिये। इस सिद्धांत को अभी से समाप्त करने का ख्याल इसलिये होता है कि यह कल्पना करना सर्वथा संभव है कि अन्य प्रांत भी कई वस्तुओं के निर्यात शुल्क में भाग मांग सकते हैं, जो कि उनके क्षेत्र में उत्पन्न

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

होती हों और निर्यात होती हों और भारत सरकार उन पर निर्यात-कर वसूल करती हो। यदि ये भावना बढ़ती जायेगी तो भारत सरकार के लिये यह अत्यन्त कठिन बात हो जायेगी। परिणामत: यह विनिश्चय किया गया है कि इस सिद्धांत का अब निश्चय से निराकरण करना चाहिये। पर यह भी इतना ही स्पष्ट है कि यदि निर्यात शुल्क के विभाजन के इस सिद्धांत को अकस्मात वापस ले लिया गया, तो इससे उन कई प्रांतों के आय व्ययक के संतुलन में कठिनाई उत्पन्न हो सकती है, जो कि अब तक निर्यात कर के अंश पर निर्भर थे। अत: यह उपबन्ध बनाया गया है कि निर्यात कर में स्पष्टत: अंश देने के स्थान पर एक बराबर की राशि या ऐसी राशि, जो राष्ट्रपति निश्चित करे, उन प्रांतों को उस कालावधि के लिये दे दी जाये जब तक कि निर्यात शुल्क आरोपित रहे, अथवा दस वर्ष की समाप्ति तक, जो भी पहले हो। यह इसलिये रखा गया है कि इन प्रांतों को पर्याप्त समय मिल जाये, जिसमें कि वे अपने साधनों का विकास कर सकें, जिससे कि अनुच्छेद में उल्लिखित कालावधि के पश्चात् वे अपने आयव्ययक को संतुलित कर सकें।

मुझे आशा है, श्रीमान्, कि इस संशोधित अनुच्छेद 254 में जो ठीक सिद्धांत निहित है, वह सदन को स्वीकार्य होगा।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रांत : जनरल): श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:-

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 254 के खंड (1) में 'by the President' इन शब्दों के स्थान पर 'by Parliament by law' ये शब्द रख दिये जायें।"

मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा बताये गये इस सिद्धांत से सहमत हूं कि निर्यात शुल्क को एक साथ एकत्र करना चाहिये और फिर, यदि आवश्यक हो तो, प्रांतों की आवश्यकताओं के अनुसार बांट देना चाहिये। किन्तु मैं अनुभव करता हूं कि यह वितरण केवल संसद ही विधि द्वारा करे। में मसौदा-समिति द्वारा स्वीकृत इस सिद्धांत के विरुद्ध हूं कि राष्ट्रपति को निधि के वितरण का अधिकार दिया जाये। यह वितरण आयव्ययक को पेश करते समय वित्त विधेयक में दिखाया जाना चाहिये और संसद् में उस पर समुचित विचार होना चाहिये। यह शक्ति राष्ट्रपति को देना तो मेरे ख्याल में अलोकतंत्रात्मक है और मुझे इसके लिए कोई औचित्य दिखाई नहीं देता; अन्यथा राष्ट्रपति कोई ऐसा काम कर सकता है, जिसे संसद् पसन्द न करे और फिर भी संसद् हस्तक्षेप नहीं कर सकती। यह शक्ति संसद् को देने से हमारा संविधान अधिक लोकतंत्रात्मक बन जायेगा। संसद्, जिस पर समस्त देश के वित्तों का वितरण का भार है, निस्संदेह ऐसा आयोजन करेगी कि विधि का ठीक प्रकार से वितरण हो। अत: मेरे विचार में मेरा संशोधन स्वीकृत हो जाना चाहिये।

(कोई और संशोधन पेश नहीं हुआ।)

***माननीय रेवरेंड जे.जे.एम. निकल्स राय** (आसाम : जनरल): श्रीमान्, मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी—पर मैं उसे पेश नहीं कर रहा हूं।

संशोधन इस प्रकार है:

"कि भारत सरकार द्वारा पटसन अथवा पटसन के सामान तथा चाय पर आरोपित निर्यात-कर में से न्यूनतम पचास प्रतिशत अथवा कोई उच्चतर प्रतिशत राशि, जो कि निर्धारित किया जाये, प्रति वर्ष भारत की संचित निधि पर भारित होगी; जो कि उन राज्यों को सहायक अनुदानों के रूप में दी जायेगी, जो कि उन वस्तुओं के उत्पादन एकक हैं।"

मैं देखता हूं कि मसौदा-समिति ने अपने मौखिक मस्विदे को बदल दिया है और आज मध्याह्नतर में डॉ. अम्बेडकर ने नया मस्विदा पेश किया है। इस नये संशोधन में पटसन तथा पटसन के सामान पर निर्यात शुल्क का अंश राज्यों को देने के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया गया है। "ऐसी राशियां जो कि राष्ट्रपति निर्धारित करे" उन राज्यों को दी जायेंगी, जिनका कि संशोधन में उल्लेख है, पर इस नये संशोधन में कोई प्रतिशत भाग का उल्लेख नहीं है। मस्विदा-समिति ने यह भी संकेत किया है कि बंगाल, बिहार, आसाम और उड़ीसा के राज्यों को, जो कि पटसन और पटसन के सामान के उत्पादक-एकक हैं, दस वर्ष के लिये या तब तक सहायक अनुदान दिये जायेंगे, जब तक की पटसन या पटसन के सामान पर निर्यात-कर जारी रहे, जोकि पहले हो। पर इस बात का कोई निश्चय नहीं है कि प्रत्येक उत्पादक एकक को कितना मिलेगा। मसौदा-समिति द्वारा संशोधित अनुच्छेद में केवल पटसन और पटसन के सामान के निर्यात-शुल्क का ही उल्लेख है। उसमें किसी और निर्यात-शुल्क का उल्लेख नहीं है। हम आसाम वाले अनुभव करते हैं कि इसमें चाय के निर्यात-शुल्क का भी उल्लेख होना चाहिये था। भारत में पैदा होने वाली कम से कम दो-तिहाई चाय आसाम में पैदा होती है। आसाम में लगभग 3,950 लाख पौंड चाय होती है। भारत सरकार ने गत 5 वर्षों में लगभग 19 (उन्नीस) करोड़, 90 लाख रुपये इससे प्राप्त किये हैं। अब 1947-48 से, भारत सरकार प्रतिवर्ष लगभग 6 करोड़ रुपये आसाम की चाय के निर्यात-शुल्क से वसूल कर रही है। हम अनुभव करते हैं कि आसाम को इस निर्यात शुल्क में से अंश मिलना चाहिये और केन्द्रीय सरकार ने हमें इस निर्यात-शुल्क में से कुछ नहीं दिया है। आसाम को केवल तीस लाख रुपये सहायता मिली है। केन्द्र चाय के निर्यात कर से जो कुछ प्राप्त कर रहा है, उसकी तुलना में यह राशि कुछ भी नहीं है।

श्रीमान्, जब हम आसाम में पैदा होने वाले पटसन और चाय का हिसाब लगाते हैं, तो हम देखते हैं कि आसाम के उत्पादनों पर शुल्कों से केन्द्र को प्रतिवर्ष लगभग 8 करोड़ रुपये प्राप्त होते हैं। आखिर हम देखते हैं कि आसाम में पैदा होने वाली चाय और पटसन पर उत्पादन-शुल्क और निर्यात-शुल्क तथा आसाम से वसूल होने वाले आय-कर से केन्द्रीय सरकार की थैली में अगभग 10 करोड़ रुपये आते हैं, वे हमें आय-कर के रूप में 120 लाख और पटसन शुल्क के रूप में 40 लाख तथा 40 लाख सहायता के, कुल मिलाकर 190 लाख देते हैं।

[माननीय रेवरेंड जे.जे.एम. निकल्स राय]

अब निस्संदेह हम अनुभव करते हैं कि अब तक केन्द्र ने आसाम प्रांत के साथ न्याययुक्त व्यवहार नहीं किया है। पर हमें आशा है कि किसी प्रकार विद्यमान सरकार, जो कि हमारी अपनी सरकार है, इन सब बातों पर विचार करेगी और आसाम को कम से कम अच्छी सहायता देगी, चाय-शुल्क में से अंश न सही। क्योंकि केन्द्र आयकर के रूप में तथा निर्यात-शुल्क और उत्पादन-शुल्क के रूप में लगभग 10 करोड़ ले रहा है, अतः हम न्याय के नाते उनसे इसका आधा भाग लेने के हक्कदार हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि इस सदन का तथा भारत सरकार का यह दृष्टिकोण है कि पटसन-शुल्क के सिवाय किसी निर्यात-शुल्क में से किसी प्रांत को कोई अंश नहीं मिलना चाहिये। मेरी समझ में यह नहीं आता कि यह अपवाद क्यों रखा गया है। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि जब यह दिया गया था, तब बंगाल अत्यधिक वित्तीय कठिनाई में था और उस समय सरकार ने प्रांतों को निर्यात-शुल्क या अन्य कोई शुल्क न देने के सिद्धांत में डील कर दी। किन्तु, श्रीमान्, वह सिद्धांत थोड़ा सा और विस्तृत करके आसाम की सहायता की जा सकती है, जो कि वास्तव में दिवालियापन की स्थिति में है। हम पहले ही कह चुके हैं कि आसाम को एक करोड़ रुपया का घाटा रहता है। आसाम और अन्य प्रांतों द्वारा भारत सरकार को जो सरकारी रिपोर्ट आती है, और संघीय संविधान के वित्तीय उपबन्धों पर विशेषज्ञ-समिति को पेश की जाती है, और जो पुस्तक रूप में छप चुकी है, उससे यह पता लगेगा कि जब सारी योजनायें और संस्थायें, जिन पर अब भारत सरकार के युद्धोपरांत अनुदान के अंतर्गत कार्य आरम्भ हुआ है, पूरी हो जायेगी और यदि आसाम अल्कोहल मद्य प्रतिषेध के कार्य को भी हाथ में ले लेगा, जो कि भारत के कांग्रेस दल की नीति है, तो आसाम को भावी वर्षों में लगभग 10 करोड़ का घाटा रहा करेगा।

इसलिये, श्रीमान्, मैं प्रार्थना करना चाहता हूं कि इस मामले पर विचार किया जाये तथा आसाम के प्रांत के लिए कुछ न कुछ किया जाये। यदि चाय के शुल्क द्वारा ऐसा नहीं हो सकता, तो सहायता द्वारा होना चाहिये। किन्तु जब मैं केन्द्र तथा राज्य के मध्य वित्तीय संबंधी विषयक अनुच्छेदों को देखता हूं, तो उसकी कोई आशा दिखाई नहीं देती। अनुच्छेद 253 को देखिये। इसके कारण भारत सरकार किसी प्रांत को कोई सहायता दे ही नहीं सकती, जब तक कि संसद् ही ऐसा न करे। अनुच्छेद 255 से भी भारत सरकार को कोई शक्ति नहीं मिलती, जब तक कि संसद् ही ऐसा न करे कि वह ऐसे प्रांतों को सहायता दे सके, जो कि घाटे में हों।

प्रायः छोटे प्रांत के लिये यह कठिन होता है कि वह संसद् द्वारा अपनी बात पूरी करवा सके। जिन प्रांतों के संसद् में बहुत से सदस्य होते हैं, वे प्रभाव डालने में समर्थ हो जाते हैं और जो चाहे ले लेते हैं। प्रायः छोटे प्रांतों की कोई चिंता नहीं करता। मुझे आशा है कि इन मामलों में ऐसा नहीं होगा। किंतु यदि सदन इन बातों पर विचार करेगा, मुझे विश्वास है कि मसौदा-समिति निर्देशित उपबन्धों पर पुनर्विचार करेगी और चाय-शुल्क के विषय में आसाम के मामले को विशेष मामला समझेगी, जैसे कि पूर्ववर्ती सरकार ने पटसन-शुल्क के विषय में बंगाल के मामले में किया था।

श्रीमान्, मुझे खेद है कि मैं अपने संशोधन पर सदन में जोर नहीं दे सकता, जिसके कारण माननीय सदस्यों को पता ही है। किंतु मैं प्रार्थना करता हूं कि इस मामले पर यह सदन ध्यान से विचार करे, जिसके कि सदस्य संसद् के सदस्य भी हैं और विद्यमान भारत-सरकार के सदस्य भी हैं। इन शब्दों के साथ मैं आशा करता हूं कि विद्यमान सरकार आसाम की इन स्थितियों पर विचार करेगी और जब विभिन्न प्रांतों को सहायता के अनुदान देने का प्रश्न उठे, तब आसाम के मामले पर ध्यानपूर्वक विचार किया जायेगा तथा ऐसी सहायता दी जायेगी, जिससे कि वह अपना प्रशासन चला सके और अपने प्रशासन स्तर को भारत केन्द्रिय भागों के स्तर पर ला सके।

*__पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र__ (पश्चिमी बंगाल : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं भारत-संघ के एक महत्वपूर्ण पटसन उत्पादक एकक की ओर से सदस्य हूं, अत: मैं इस संबंध में कुछ बातें करना अपना कर्तव्य समझता हूं।

मैं इस बात से सामान्यत: सहमत हूं, जो कि राजनैतिक तथा आर्थिक सिद्धांत के रूप में कही गई है, कि सारे शुल्क, आयात या निर्यात या अन्य राज्य के लिए होते हैं और इसलिये वे भारत सरकार के लिये हैं। सिद्धांत के रूप में यह बिल्कुल ठीक है, किन्तु मुझे भय है कि मस्विदा-समिति अंत में उलटे मार्ग पर चल पड़ी तथा उसने ऐसा प्रस्ताव रखा है, जो देखने में हानिहीन है पर पश्चिमी बंगाल के कहलाने वाले प्रांत की समस्त करारोपण प्रणाली के लिए गंभीर खतरा है। इससे किसी हद तक बिहार, आसाम और उड़ीसा जैसे अन्य पटसन-उत्पादक एककों के वित्तों पर भी प्रभाव पड़ेगा, पर बंगाल के मामले में तो यह एक गंभीर खतरा है। सदन को एकदम बता देना चाहता हूं कि जब मैं इस शुल्क विशेष की बात करता हूं तब मस्विदा-समिति के समक्ष करबद्ध नहीं खड़ा हूं। मेरे पास इससे बहुत सबल कारण हैं। सर्वप्रथम सदन को मैं यह बताना चाहता हूं कि इस पटसन-शुल्क का बहुत लम्बा इतिहास है। यह बात इतनी साधारण नहीं है जितनी कि डॉ. अम्बेडकर ने इसे बनाकर दिखाना चाहा था। पटसन-शुल्क सबसे पहले 1916 में युद्धोपाय के रूप में लगाया गया था, और उस वर्ष से 1936 तक इस शुल्क से प्रति वर्ष चार करोड़ रुपये प्राप्त होते रहे। जब यह कर पहले लगाया गया, तब यह सामान्यत: धारणा थी कि यह प्रथम विश्व युद्ध के प्रभावी संचालन के लिए धन एकत्र करने के लिए लगाया गया था किन्तु युद्धावसान पर यह शीघ्रातिशीघ्र बन्द कर दिया जायेगा। श्रीमान्, जैसा कि सबको पता है, सरकार एक विशेष प्रकार की संस्था है जो एक बार कर लगाने के पश्चात् उसे आसानी से छोड़नी नहीं। इस पटसन शुल्क पर तीसरे गोलमेज सम्मेलन में विचार हुआ और वहां यह बहुत स्पष्ट हो गया था कि यह साधारण प्रकार की कर नहीं है। करारोपण पड़ताल समिति के अनुसार निर्यात कर तभी लगाया जा सकता है जबकि वह वस्तु, जिस पर कर लगाने का प्रस्ताव हो, पहले तो एकाधिकार की वस्तु हो और दूसरी बात आरोपण थोड़ा सा ही हो। करारोपण पड़ताल समिति ने यही कसौटी रखी थी। अब 1936 तक पटसन बंगाल प्रांत का लगभग एकाधिकार ही था। अत: करारोपण पड़ताल समिति के प्रतिवेदन के अनुसार भारत सरकार के लिए बंगाल में पटसन पर कर लगाने का औचित्य था। किन्तु तीसरी गोलमेज परिषद् में यह कहा गया था, और इस बात पर काफी लम्बी बहस हुई थी कि पटसन पर निर्यात कर उचित है अथवा नहीं। श्रीमान्, मैं अधिक विस्तार की बातों में

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

जाना नहीं चाहता, पर मैं एक-दो प्रश्नों का उल्लेख करना चाहता हूं जो कि गोलमेज सम्मेलन में उठाये गये थे। यह प्रश्न माननीय सर नृपेन्द्र नाथ सरकार ने उठाया था, जो कि भारत-सरकार के भूतपूर्व विधि-मंत्री थे और जिन्होंने कलकत्ता के व्यापार मंडल के सभापति सर एडवर्ड वेन्थल से प्रश्नोत्तर किये थे। सर एडवर्ड वेन्थल 1946 में केन्द्रीय विधान-मंडल में सदन के नेता भी थे। इस प्रश्नोत्तर में यह संदेह से परे सिद्ध हो गया था कि यह एक विभेदात्मक कर है—मैं सदन से कहता हूं कि यह एक विभेदात्मक कर है, जो एक प्रांत विशेष की कृषि के उत्पादन पर लगाया गया था, और जैसा कि आप जानते हैं कृषि प्रांतीय विषय है, और इसलिये पटसन कर एक विभेदात्मक कर है, केवल इसी दृष्टिकोण से नहीं कि इससे एक कृषिजन्य पदार्थ पर कर लगता है, एक प्रांत विशेष के कृषिजन्य पदार्थ पर कर लगता है, वरन् इसलिये भी कि इससे कुछ प्रातों पर कर लगता है, दूसरों पर नहीं। श्रीमान्, मैं एक दो कंडिकाएं पढ़ देता हूं। तीसरे गोलमेज सम्मेलन में स्वर्गीय सर एन.एन. सरकार ने प्रश्न संख्या 6257 पूछा था:—

"इस कर का प्रभाव भूमि के लगान पर तथा रैयत पर क्या पड़ता है?"

सर एडवर्ड वेन्थल ने उत्तर दिया:—

"यह कृषि उत्पादन पर प्रत्यक्ष कर है, अत: इसका वहीं प्रभाव है जो भूमि-लगान का है। निस्संदेह यह उत्पादक पर जाकर पड़ता है।"

"जब यह सर्वप्रथम 1916 में आरोपित हुआ था, तब यह युद्धोपाय के रूप में था और उस उमय ऊंचे मूल्य होने से शायद यह उपभोक्ता पर जाकर पड़ता था, किन्तु आज वह निस्संदेह उत्पादक पर पड़ता है, और मुख्यत: बंगाल की रैय्यत पर पड़ता है, और यह प्रभाव वास्तव में 18 प्रतिशत के लगभग है।"

तत्पश्चात् एक अन्य प्रश्न (संख्या 6259) के उत्तर में जो सर जोसफ नुल ने दिया था, यह मामला और भी स्पष्ट हो गया। सर अब्दुर रहीम द्वारा उठाये गये प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा था:—

"यह कृषि-आय पर कर है और यह कुछ ही प्रांतों पर लगाया हुआ विभेदात्मक कर है।"

श्रीमान्, इस पटसन-शुल्क पर बहुत से प्रश्न पूछे गये थे, पर मैं उन सब विस्तार की बातों से सदन को कष्ट देना नहीं चाहता, पर यह बात संदेह से परे सिद्ध हो गई थी कि यह एक विचित्र कर था क्योंकि इससे उन दिनों भी सीमित सुधारों के सांविधानिक उपबन्धों का उल्लंघन होता था। अत: मेरा आपसे निवेदन है कि डॉ. अम्बेडकर के लिये यह अनुभव करना ठीक नहीं है कि केन्द्र संबद्ध प्रांतों को इस कर का अंश दे देता है वह उसकी दानवीरता है। यह तो तीसरे गोलमेज सम्मेलन में इन वाद-विवादों का फल है तथा बंगाल प्रांत की ओर से सर एडवर्ड वेन्थल ने जो अकाट्य प्रमाण दिये थे उनका परिणाम है कि ग्रेट ब्रिटेन की सरकार ने भारत शासन अधिनियम 1935 की धारा 142 में यह उपबन्ध रखा था कि पटसन-शुल्क में से 50 प्रतिशत उस प्रांत को मिलना चाहिये। तत्पश्चात सर ओटो नीमियर ने, जो प्रांतों और केन्द्र के मध्य राजस्व का वितरण करने

के लिए नियुक्त किये गये थे, समस्त प्रश्न पर विचार किया और बंगाल के लिए इस पटसन-शुल्क का अंश बढ़ाकर $62^{1}/_{2}$ प्रतिशत कर दिया। यह बात सर ओटो नीमियर के पंचाट के पृष्ठ 10 पर लिखी है:

"अत: मैं सिफारिश करता हूं कि अधिनियम की धारा 140 (2) के अधीन यह प्रतिशत भाग बढ़ाकर $62^{1}/_{2}$ प्रतिशत कर देना चाहिये।"

यह पटसन-कर ऐसा है कि ग्रेट-ब्रिटेन की सरकार ने प्रमुख पटसन उत्पादक प्रांत बंगाल के दावे को 50 प्रतिशत तक अधिनियम में कानूनी रूप से स्वीकार किया है, पर सर ओटो नीमियर तो अपने पंचाट में और भी आगे बढ़ गये और $62^{1}/_{2}$ प्रतिशत दे दिया। अब जबकि संविधान-सभा आरम्भ में बैठ रही थी, तब माननीय अध्यक्ष महोदय ने एक समिति नियुक्त की जो 'संघीय संविधान के वित्तीय उपबन्धों की विशेषज्ञ समिति' कहलाती थी। इस विशेषज्ञ समिति ने, जिसका निर्देश कई सदस्यों ने सरकार समिति के नाम से दिया है, इस विषय में कुछ सिफारिशें की थीं। गत दो तीन दिनों में मैंने देखा है कि सदन में विशेषज्ञ समिति के प्रतिवेदन पर भिन्न-भिन्न मत हैं। मैंने देखा है कि कुछ सदस्य इसे वेद-वाक्य मानते हैं और वे सदन से जो बात मनवाना चाहते हैं, उसके लिए वे सचाई से उसकी सिफारिशों का उद्धरण देते हैं। मैंने यह भी देखा है कि ऐसे सदस्यों ने बिल्कुल बुरा बताया है जिनके विवेक का हम आदर करते है। मैं माननीय सदस्यों से यह पूछना चाहता हूं कि वे अपने अभिप्रायों को दिन प्रतिदिन अपने विचारों को क्यों बदलते हैं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि संविधान-सभा हेरकलीतस की दार्शनिकता-अनन्त धारा प्रवाह की नीति के चक्कर में फंस गई है; मैं देखता हूं कि मस्विदा-समिति के ही विचारों में नहीं, वरन् इस सदन के सदस्यों की सम्मति में भी लगातार परिवर्तन होता रहता है। इस समिति के प्रतिवेदन की स्याही भी नहीं सूखी है, हम देखते हैं इसे रद्द कर दिया जाता है। पर मैं इस प्रतिवेदन का एक अंश उद्धृत करना चाहता हूं जो इस प्रश्न के विषय में है:

"पर यह आवश्यक है कि सम्बद्ध प्रांतों को उनके राजस्व की हानि के लिए प्रतिकर दिया जाये, और हम सिफारिश करते हैं कि दस वर्ष की कालावधि के लिये या जब तक पटसन या पटसन के सामान पर निर्यात-शुल्क हटा न दिया जाये तब तक के लिए जो भी पहले हो, इन सरकारों को निम्नलिखित नियत राशियां प्रतिवर्ष प्रतिकर के रूप में दे दी जायें:

प्रांत	राशि (रुपये)
पश्चिम बंगाल	100 लाख
आसाम	15 लाख
बिहार	17 लाख
उड़ीसा	3 लाख''

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

मैं यह नहीं समझता कि मस्विदा-समिति को पिछली स्थिति से क्यों हटाना पड़ा और उन्होंने इस विषय पर मूल मस्विदे में ऐसा क्रांतिकारी परिवर्तन क्यों किया। मूल अनुच्छेद 254 इस प्रकार है:

"इस संविधान के अनुच्छेद 253 में किसी बात के होते हुए भी, सन अथवा सन की बनी हुई वस्तुओं के किसी निर्यात-शुल्क के प्रतिवर्ष के शुद्ध उदय का उतना अनुपात, जो संसद विधि द्वारा निश्चित करे, भारत के राजस्व का भाग नहीं बनेगा, किंतु सन के उत्पादन करने वाले राज्यों को विधि द्वारा निर्मित विभाजन-सिद्धांतों के अनुसार नियोजित किया जायेगा।"

अकस्मात आज नये मस्विदे से हम आश्चर्य में पड़ गये हैं। मैं जानना चाहता हूं कि मस्विदा-समिति ने यह मूल परिवर्तन क्यों किया है जिससे कि पुराने प्रस्ताव का बिल्कुल निराकरण हो गया है। यह बहुत गंभीर मामला है। आज पश्चिमी बंगाल के प्रांत को बंगाल के अविभाजित प्रांत का सारा ऋण ढोना पड़ता है। आजकल तो यह नियम सा हो गया है कि बंगाल के प्रांत को 'समस्या प्रांत' कहते हैं। क्या आपने कभी यह सोचने के लिए समय निकाला है कि उस समस्या का कितना अंश आपका बनाया हुआ है? क्या आपने कभी सोचा है कि आप इस समस्या प्रांत की समस्याओं को कैसे हल कर सकते हैं? क्या आपने कभी उस प्रश्न पर अपना दिमाग लगाया है? मैं पूछता हूं कि दस वर्ष के अंत में या यदि सारा पटसन-शुल्क पहले ही हटा दिया जाये तब क्या होगा? बंगाल के विक्तों की क्या स्थिति होगी? आयकर की विभाज्य निधि में से बंगाल को 20 प्रतिशत मिलता था, पर प्राधिकारयुक्त व्यक्तियों ने उसे कम करके 12 प्रतिशत कर दिया है, इस आधार पर कि दो तिहाई बंगाल तो चला गया है। उन्हें असली स्थिति का पता नहीं है। यह ठीक है कि दो तिहाई बंगाल पाकिस्तान में चला गया है, पर कुल आयकर राजस्व का 79/80 भाग पश्चिमी बंगाल से ही प्राप्त होता है। क्या प्राधिकारियों को इसका पता नहीं है? पटसन का उत्पादन करने वाला दो तिहाई प्रदेश पूर्वी पाकिस्तान में चला गया है, पर क्या वे यह नहीं जानते कि रत्ती रत्ती पटसन, जो कि उगाया जाता है, उसकी सफाई, कताई, बुनाई आदि पश्चिमी बंगाल में ही होती है? इस बात को अच्छी तरह नहीं समझा गया है। आपको इस आर्थिक स्थितियों पर यथार्थवाद के दृष्टिकोण से विचार करना चाहिये। अध्यक्ष महोदय, मैं बलपूर्वक कहता हूं कि सरकार ने मेरे प्रांत को कोष का भाग देते समय इस तथ्य पर समुचित विचार नहीं किया। मैं सदन को बताना चाहता हूं कि आज पश्चिमी बंगाल भारत के पटसन उद्योग का घर है। क्या आप जानते हैं कि वह आपके लिये प्रतिवर्ष कितने डालर कमा रहा है? 1948-49 में इसने 76 करोड़—इतनी बड़ी राशि डालरों के रूप में कमाई थी। क्या आप भारत अधिराज्य के निर्यात की कोई अन्य मद बता सकते हैं जिससे आप विदेशी विनिमय में इतनी बड़ी राशि कमाते हैं? अब प्रांतों में पटसन की खेती की वास्तविक स्थिति क्या है? बंगाल की पटसन मिलों को प्रतिवर्ष 71,00,000 पटसन की गांठों की आवश्यकता होती है। विभाजन के सद्य पश्चात् अर्थात् 1947-48 में भारत संघ 17 लाख गांठें उगाता था। अगले वर्ष आसाम, बिहार और उड़ीसा ने भी अपनी उपज बढ़ा दी और कुल उपज बढ़कर इस वर्ष 21 लाख गांठे हुईं और इस वर्ष लगभग 30 लाख गांठे होंगी। यदि केन्द्र समुचित प्रोत्साहन दे तो और भी

उपज बढ़ जायेगी। इस समय सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसका विदेशी विनिमय पर प्रभाव पड़ता है। अब मैं बिल्कुल गंभीरता से पूछता हूं कि जब यह माल भारत सरकार के लिए अत्यावश्यक विदेशी विनिमय और डालर ऐसे भारी परिमाण में कमाता है, तो क्या वे प्रांत, जो पटसन उगाते हैं और उसका माल तैयार करते हैं, कानूनी रूप में उसका बदला पाने के हकदार नहीं हैं। आज डॉ. अम्बेडकर आगे आकर कहते हैं, "ना, ना; यह बहुत संकीर्ण सिद्धांत है, मैं इसे राष्ट्रपति पर छोड़ना चाहता हूं"। किसी प्रांत के भाग से लूट लेना, क्या यह अच्छी बात है? मुझे खेद है कि मुझे जरा तीक्षणता से बोलना पड़ता है। जब मैं यह अनुभव करता हूं कि सारा सदन ऐसे सिद्धांत से गलत रास्ते पर चलाया जा रहा है, जो देखने में तो सीधा सादा है, पर जिसका प्रभाव इन प्रांतों पर बहुत गंभीर, बहुत बुरा पड़ता है, तो मुझे इसके विरुद्ध अपनी विरोध भावना का प्रदर्शन करना ही पड़ता है। मैं चाहता हूं, मेरे माननीय मित्र इसे पेश ही नहीं करते, या इस अनुच्छेद को हटा ही देते। उन्होंने इसे जिस रूप में पेश किया है वह तो अधिक भयानक है। यदि वे नमक के विषय में और इस चीज पटसन पर भी बिल्कुल चुप रहते तो शायद इतनी जोखम नहीं थी। पर एक बार मस्विदे में पटसन-शुल्क की आय को भारत के राजस्व में से हटा देने के पश्चात् अकस्मात डेढ़ मास के पश्चात् वे उपबन्ध करते हैं कि इन प्रांतों के लिए कुछ सहायक-अनुदान भारत की संचित निधि पर भारित होंगे, जो कि राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित होंगे। मैं देखता हूं कि 'निर्धारित' शब्द का अर्थ यहां यह है कि 'वित्त आयोग द्वारा निर्धारित' और जब तक 'वित्त आयोग' न बने तब तक 'राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा निर्धारित' और वित्त आयोग बनाने के पश्चात् इसका अर्थ है 'राष्ट्रपति द्वारा वित्त आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् आदेश द्वारा निर्धारित'। उस दिन मैंने माननीय सदस्य से एक प्रश्न पूछा था कि संविधान के आरम्भ के सद्यः पश्चात् इन प्रांतों बंगाल, बिहार, आसाम और उड़ीसा को पटसन-शुल्क देने के विषय में क्या स्थिति होगी।

श्रीमान्, माननीय प्रधान मंत्री ने, जो अभी उठ कर गये हैं, हमें बताया था कि वे शीघ्र ही एक समिति नियुक्त करेंगे। मुझे पता नहीं है कि कितने आयोग नियुक्त होंगे। अनुच्छेद 251 में वित्त आयोग का पहले ही उपबन्ध है। कदाचित वह तदर्थ समिति के रूप में होगा। मैं उनका यही अर्थ समझता हूं और यही अर्थ डॉ. अम्बेडकर ने हमें समझाया है। यह जानना महत्वपूर्ण है कि यदि किसी कारण से यह तदर्थ समिति कोई विनिश्चय न कर सके या विनिश्चय करने में देर कर दे, तो क्या हम अनुच्छेद 251 के खंड (3) वाले आयोग की प्रतीक्षा करेंगे अथवा कोई निश्चय होने तक राष्ट्रपति स्वयं सहायक अनुदान दे देगा, जैसा कि मैं देखता हूं कि अनुच्छेद के खंड के उप-खंड (ख) (2) में उपबन्ध है? इनमें से कोई भी व्यवस्था संतोषजनक अथवा उचित नहीं है। यदि आप कुछ भी नहीं कर सकते तो यथापूर्व स्थिति रहने देनी चाहिये। कर को समाप्त किया जाये या नहीं यह तो हमें निश्चय करना है, संसद को निश्चय करना है। किन्तु यह कल्पना करने का प्रयत्न करिये कि संविधान के आरम्भ में ही क्या होने वाला है। साफ कह दूं कि मुझे आशंका है, क्योंकि मैं जानता हूं कि जब मोटेग-चेम्सफोर्ड सुधार-योजना लागू की गई थी, तब यह योजना वित्त-पर्वत से टकरा कर गिर गई। इसका कारण मैस्टन पंचाट था। ओटो नीमियर पंचाट भी पिछली सरकार की अशुद्धियों को सुधार नहीं सका। मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर को यह जानकर दिलचस्पी होगी

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

कि बंगाल में उद्गृहीत कुल राजस्व का 70 प्रतिशत केन्द्र को चला जाता है। इस बात का बहुत लोगों को ज्ञान नहीं है। सर बाल्टर लेटीन ने साइमन आयोग को जो प्रतिवेदन दिया था, उसमें आप इन सब बातों को देखेंगे। अतः जब हम केन्द्र से पटसन-शुल्क की आय का सारवान भाग मांगते है तो वह दया की प्रार्थना नहीं है। विगत में वित्तों के इस अन्यायपूर्ण और अनुचित वितरण के कारण ही मेरे प्रांत को कष्ट झेलने पड़े हैं और इसके परिणामस्वरूप आपके लिए एक समस्या उठ खड़ी हुई है। यदि आप इस समस्या को राजनीतिज्ञता की भावना से नहीं सुलझायेंगे तो यह समस्या बढ़ जायेगी और ये समस्याएं आपको, आप सबको अंततः हड़प कर जायेंगी।

*__श्री विश्वनाथ दास__ (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान् मैं संशोधन का विरोध करने के लिए खड़ा हुआ हूं।

प्रस्ताव को पेश करते समय, माननीय विधि मंत्री.....

*__पं. हृदयनाथ कुंजरू__ (संयुक्तप्रांतः जनरल): माननीय सदस्य किस संशोधन का विरोध कर रहे हैं?

*__श्री विश्वनाथ दासः__ मैं उनके पटसन-शुल्क संबंधी संशोधन का निर्देश कर रहा हूं।

*__पं. हृदयनाथ कुंजरूः__ वे डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का निर्देश कर रहे हैं या प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन का?

*__श्री विश्वनाथ दासः__ मैंने माननीय विधि-मंत्री कहा था; प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना का मतलब नहीं निकल सकता।

माननीय विधि-मंत्री ने मस्विदा-समिति के सभापति के नाते इस वितरण प्रणाली को संकुचित बताया था मैं उनसे सहमत हूं कि यह संकुचित प्रणाली है क्योंकि विषय होना चाहिये और है। कल्पना की कोई भी उड़ान से यह प्रांतों के क्षेत्र में नहीं आ सकता और न आना ही चाहिये। इस कारण यह प्रणाली संकुचित है। ऐसे विश्वास के कारण तो मेरे मित्र को और जिस सरकार के वे प्रतिनिधि हैं उसे चाहिये था कि वे एक पूर्ण वित्तीय पड़ताल करें, करारोपण की पड़ताल करें और पता लगाये कि विविध प्रांतों की कर देने की औकात कितनी है और उनसे कितना कर लगाकर उद्गृहीत किया जाता है, और फिर उन्हें सदन को स्वीकार्य सुझाव लेकर आना चाहिये था।

श्रीमान्, करारोपण का ब्रिटिश तरीका, जो अब भी जारी रखा गया है, निस्संदेह संकुचित है। उसका उद्देश्य करारोपण की वैज्ञानिक प्रणाली का निर्माण करना नहीं था। अंग्रेजों ने जैसे उन्हें सुविधा दिखाई दी कर लगा दिया, तात्कालिक स्थिति का ही ख्याल किया। कुछ समय तक यह प्रणाली रही और जिसने सबसे अधिक शोर मचाया उसे सबसे अधिक मिल गया। 1919 से उन्होंने प्रणाली को बदलने

का दम भरा और हमें मैस्टन पंचाट मिला। वह ठीक सिद्ध नहीं हुआ और इसके परिणामस्वरूप जांच पड़ताल हुई, वित्तीय पड़ताल हुई जो गोलमेज सम्मेलन ने कराई। उन्हें अत्यंत आश्चर्य हुआ कि बंगाल, आसाम, बिहार और उड़ीसा बहुत कठिनाई में थे। उन्होंने सरकार को यह मंत्रणा भी दी, यदि वह स्वीकृत हो जाती तो भारत एक कदम आगे बढ़ जाता, कि प्रातों को आबादी के आधार पर आयकर का एक भाग दिया जाये। दुर्भाग्यवश, जैसा कि मैं कह चुका हूं, अंग्रेजों की स्थिति को संभालने की और विनिश्चय करने की विचित्र प्रणाली थी। इसके परिणामस्वरूप हमें नीमियर पंचाट मिला।

अतः भारत पर पंचाट ही पंचाट थोपे गये और इसका परिणाम यह हुआ कि आज आपके यहां कोई वास्तविक वित्तीय व्यवस्था नहीं है जिसे आप राष्ट्रीय अथवा वांछनीय अथवा आवश्यक कह सकें। अतः मैं इसे स्वीकार करता हूं और अपने माननीय मित्र के साथ सहमत हूं कि पटसन-शुल्क का अंश प्रांतों में वितरित करने की विद्यमान व्यवस्था इस दृष्टिकोण से देखने पर निस्संदेह संकुचित है; किन्तु उनके विरुद्ध मेरी केवल यही शिकायत है कि उन्होंने इस गड़बड़ को मिटाने के लिए कुछ नहीं किया है, कुछ कदम नहीं उठाये हैं। श्रीमान्, आपने कृपा करके पड़ताल आयोग नियुक्त किया था, किन्तु मुझे स्पष्ट कहना पड़ेगा कि, जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, कि उस पड़ताल का क्षेत्र इतना सीमित था कि कठिनाई-ग्रस्त प्रांत यथेष्ट न्याय प्राप्त नहीं कर सकते। मेरा दावा है कि करारोपण, वितरण और अन्य बातों की व्यवस्था की भविष्य में पूरी-पूरी छानबीन होनी चाहिये, जिससे कि इस देश के लिये एक वैज्ञानिक और राष्ट्रीय वित्त-व्यवस्था बनाई जा सके, जो कि सामाजिक न्याय की आवश्यकताओं के अनुकूल हो। तब तक ये असंगतियां अवश्य जारी रहेंगी।

मेरे मित्र श्री सक्सेना अपने संशोधन लेकर आते हैं। मुझे वे क्षमा करें, पर उनका संशोधन तो ऐसे व्यक्तियों की ओर से है जिन्हें मनचाही वस्तु प्राप्त है। आप इस व्यवस्था को संकुचित कह कर बुरा बताते हैं, उसकी निन्दा करते हैं और उन कष्टों को दूर करने के लिए कुछ नहीं करते जो कि एक विदेशी शासन के पुराने पापों के कारण उत्पन्न हुए हैं। अतएव यह अन्याय होगा कि आप यह दावा करें और इस व्यवस्था को जारी रख कर लाभ उठाते जायें और दोनों ओर से आप ही फायदे में रहें। आप दोनों ओर से लाभ नहीं उठा सकते। श्रीमान्, इस पटसन-शुल्क से आरोपण और प्रांतों में इसके वितरण का अपना इतिहास है। मैं पहले ही कह चुका हूं कि संघीय वित्त की पड़ताल समिति ने पता लगाया कि बंगला, बिहार, उड़ीसा और आसाम बहुत कठिन स्थिति में है और उनको कष्ट मुक्त करने के लिए कोई कार्यवाही नहीं की गई। सर ओटो नीमियर अपनी जांच पड़ताल के लिए भारत आ रहा था, उससे जरा पहले बंगाल के प्रांतीय राज्यपाल ने सेन्ट अन्ड्रज दिवस भोज में अपने प्रसिद्ध भाषण में कहा था कि वे यह बात अपनी ओर से तथा अपने मंत्रि-मंडल की ओर से कह रहे थे और उन्होंने दावा किया कि उन्हें दो करोड़ रुपये नहीं मिलेंगे तो वे बंगाल का प्रांतीय प्रशासन नहीं चला सकते। यह अदभुत बात है कि ऐसे उच्च लार्ड ने यह कहकर ब्रिटिश साम्राज्य की आलोचना कर डाली कि केन्द्र ने जो भूल चूक के पाप किये हैं, अर्थात् बंगाल के लिये जो जमींदारी प्रथा स्थापित की है, उनके लिए बंगाल प्रांत को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। उन्होंने कहा कि 'स्थायी प्रबंध' ने बंगाल को चार-पांच करोड़ रुपये से वंचित कर दिया है। ऐसा करने के पश्चात् यह ब्रिटिश

[श्री विश्वनाथ दास]

सरकार का काम है कि बंगाल के घाटे को पूरा करे। अत: अन्य बातों के अतिरिक्त उन्होंने अपने प्रांत के लिये न्यूनतम दो करोड़ रुपये की मांग की। अन्य प्रांतों ने भी अपनी मांगें पेश कीं। परिणाम यह हुआ, जैसा कि मैं कह चुका हूं, कि अन्य प्रांतों को भी बंगाल के साथ-साथ पटसन-शुल्क का अच्छा भाग मिल गया।

आप इसे दस वर्ष तक सीमित करने जा रहे हैं। कई प्रांतों ने इस राजस्व की प्राप्ति के आधार पर ही दूरवर्ती वार्षिक कार्यक्रम बना लिया है। वे अब क्या करेंगे? क्या आपका यह विचार है कि उन्हें राष्ट्रीय कार्यवाही के अध्याय को, राष्ट्र-निर्माण के रचनात्मक कार्यों को बन्द कर देना चाहिये और इस राजस्व से हाथ धो बैठना चाहिये? यदि ऐसा है तो उस स्रोत की, जिससे यह संशोधन आया है, अथवा यदि इस सदन के माननीय सदस्य इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लें तो उनकी, मैं अधिक प्रशंसा नहीं कर सकता। श्रीमान्, बंगाल जैसें प्रांतों का ख्याल कीजिये। यदि उन्हें प्रति वर्ष एक करोड़ से वंचित कर दिया जायेगा तो वे अपने अनुदान कैसे पूरे करेंगे? क्या आप बंगाल और आसाम के शैक्षणिक तथा स्वास्थ्य संबंधी कामों को बन्द कर देंगे? उड़ीसा जैसा प्रांत चाहे चिंता न करे, यदि उसको तीन लाख रुपये से वंचित कर दिया जाये; तीन लाख रुपये प्रतिवर्ष कोई छोटी रकम नहीं है जो छोड़ दी जाये। इन परिस्थितियों में मैं उनसे सहमत नहीं हूं जो कहते हैं कि यह दस वर्ष तक ही रहना चाहिये। यदि मेरे माननीय मित्र यह कहते कि इन दस वर्षों में वे इस देश के ढांचे और करारोपण व्यवस्था की पूरी-पूरी छानबीन करेंगे और कोई तरीका निकालेंगे, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होती। श्रीमान्, भारत सरकार ने 1946 में आस्ट्रेलिया की वैत्तिक व्यवस्था का अध्ययन करने के लिये दो अधिकारी भेजे थे—मेरे ख्याल में प्रो. अदारकर तथा श्री नेहरू को भेजा था। उनके प्रतिवेदन से संविधान-सभा को तथा मस्विदा-समिति को लाभ उठाना चाहिये था। उन्होंने केवल आस्ट्रेलिया की अर्थ व्यवस्था पर ही प्रतिवेदन नहीं दिया है, वरन यह भी सुझाव दिया है कि आस्ट्रेलिया की व्यवस्था भारत में कैसे लागू की जा सकती है। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि अनुदानों का वितरण किस प्रकार जनसंख्या तथा क्षेत्रफल के आधार पर किया जाता है और स्थायी आयोग को, जो कि उन्होंने स्थापित किया है, किस प्रकार प्राधिकार दिया जाता है कि वह कमी वाले प्रांतों से आवेदन-पत्र प्राप्त करें। वह आयोग प्रांतीय आय-व्ययकों को देखता है और कमी वाले प्रांतों को अनुदान किये जाते हैं। यदि वह स्थिति होती तो कोई आपत्ति नहीं होती। इस संविधान में पारित किसी उपबन्ध में अथवा सरकार द्वारा संसद् में अथवा संविधान—सभा में किये गये किसी ऐलान में ऐसी कोई बात नहीं है। इन परिस्थितियों में मुझे साफ कहना होगा कि मेरे माननीय मित्र विधि-मंत्री द्वारा प्रस्तावित प्रस्ताव इन प्रांतों की राष्ट्रीय कार्यवाहियों की प्रगति में अधिक सहायक नहीं होगा।

श्रीमान्, एक शब्द और कहकर मैं समाप्त कर दूंगा। आपने द्वारों को बन्द करके कुन्डी लगा दी है। आपने यह बात भी रख दी है कि विद्यमान प्रांतों के अतिरिक्त किसी प्रांत को पटसन-शुल्क नहीं मिलेगा, चाहे वे अपने प्रांत में पटसन-कृषि का विस्तार करें। यदि पत्रों में प्रकाशित समाचार ठीक है तो त्रावनकोर ने लगभग एक लाख एकड़ भूमि पर पटसन उगाने का उत्तरदायित्व लिया है। आप उन्हें क्या प्रलोभन देंगे? कोई प्रलोभन नहीं है। मद्रास के प्रति अथवा कोचीन

और त्रावनकोर के संयुक्त राज्य में वे जो भी कष्ट उठायें, उसके लिये आप उन्हें कुछ नहीं देते।

श्रीमान्, आप किसकी सहायता कर रहे हैं? आप अपनी सहायता कर रहे हैं या पाकिस्तान की सहायता कर रहे हैं। दुःख के साथ यह मानना पड़ेगा कि पाकिस्तान के हाथ में कुंजी है। उसके पास कच्चा पटसन है और आपके पास उसका सामान बनाने की कलें हैं। इसलिये पाकिस्तान अपनी शर्तें लिखवाता है और आप उसकी बात मानना चाहते हैं, क्योंकि आप डालर प्राप्त करने के लिए उत्सुक हैं। इन परिस्थितियों में केन्द्रीय सरकार का यह कर्तव्य है कि भारत में पटसन की खेती बढ़ाने में कोई कसर न रखे। मेरे मित्र द्वारा प्रस्तावित प्रस्ताव से कोई आशा पैदा नहीं होती, क्योंकि वह केवल उन्हीं प्रान्तों तक सीमित है, जो कि इस समय पटसन-शुल्क से लाभ उठा रहे हैं और इसके अतिरिक्त यह दस वर्ष तक के ही लिये सीमित है।

मैं नहीं जानता कि यह राशि किस आधार पर वितरित होगी। यदि यह वितरण विगत वितरण-आधार पर हो तो प्रांतों के लिए इस समय कृषि के विकास के लिए कोई प्रलोभन नहीं है। श्रीमान्, अपने प्रांत की बात कहते हुये मुझे स्पष्ट कहना होगा कि यह मेरे लिये बहुत बड़ी निराशा की बात है, क्योंकि उड़ीसा पटसन की खेती का विस्तृत कार्यक्रम आरम्भ कर रहा है। इसके साथ-साथ उड़ीसा में विलय राज्यों में भी पटसन की काफी खेती होती है। क्या आप उन्हें इसके अंश का लाभ नहीं देना चाहते? मैं नहीं जानता कि इन उपबन्धों से भारत सरकार को लाभ होगा या पाकिस्तान सरकार को। मैं यह बात माननीय सदस्यों पर छोड़ देता हूं कि वे इस पर स्वयं विचार करें। मेरे माननीय मित्र कहते हैं कि यह बहुत कलुषित सिद्धांत है और मैं उनसे सहमत हूं। यदि कोई यह समझता हो कि यह अवाछनीय कार्य है तो अनुच्छेद 249 को रखा ही क्यों जाये? यह अनुच्छेद कुछ माल, जैसे कि शृंगार तथा औषधीय सामान के उत्पादन कर के विषय में है और इन साधनों से प्राप्त शुल्कों को उन्हीं प्रांतों को दे दिया जायेगा जिनसे वे संगृहीत होते हैं। यदि यह ऐसा कलुषित सिद्धांत है, तो इसे संविधान में फिर क्यों रखते हैं? श्रीमान्, 'विचार-दृढ़ता तुच्छ विचार वालों के लिए हव्वा है'।

अब समय आ गया है कि आपको युक्तियुक्त और राष्ट्रीय वित्त व्यवस्था बनानी चाहिये अथवा आप प्रांतों को अपनी कर-व्यवस्था निर्धारित करने की कुछ स्वतंत्रता दे दीजिये। इस प्रश्न पर विचार करते समय मैं माननीय सदस्यों को सिंध द्वारा 1942 में की गई कुछ कार्यवाहियों का निर्देश करता हूं। 1942-1943 और 44 में सिंध सरकार ने उस प्रांत से निर्यात होने वाले चावल पर कर लगा दिया और इसके फलस्वरूप उन्हें एक बड़ी राशि प्राप्त हो गई, जो उनके बांध संबंधी ऋण को चुकाने के लिये काफी थी। हम भी उड़ीसा में यही बात कर सकते थे। पर हमने अपने मित्रों के हाथ की कठपुतली बनने से इंकार कर दिया और ऐसा लाभ उठाना नहीं चाहा जबकि हमारे भाई अन्य प्रांत कष्ट में थे। पर क्या यही कारण है कि अब प्रस्तावित विभेद को स्थायी बनाया जा रहा है? जैसाकि मैं पहले ही कह चुका हूं, मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि जब पूरी-पूरी पड़ताल होनी चाहिये। 1924-25 की भारत की करारोपण पड़ताल अब पुरानी हो चुकी है। इसी प्रकार उस समय की आर्थिक पड़ताल है। मैं अनुरोध करता हूं कि अब समय आ गया है, जबकि ऐसी पड़ताल आवश्यक है और होनी चाहिये।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास : जनरल): क्या मैं जान सकता हूं कि क्या श्री विश्वनाथ बाबू का यह ख्याल है कि इस अनुच्छेद की विद्यमान भाषा से मद्रास अथवा त्रावनकोर को पटसन-शुल्क में भाग नहीं मिल सकेगा, यदि वे भविष्य में पटसन उगायेंगे?

***श्री विश्वनाथ दास:** मुझे खेद है कि मैं अपने साथ संशोधन को नहीं लाया। किन्तु मेरा तो यही ख्याल है और मुझे प्रसन्नता होनी चाहिये यदि ऐसा न हो। मुझे खुशी होगी यदि ऐसा न हो, पर मुझे विश्वास है कि ऐसा ही है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरा प्यारा संशोधन, जिसे छोड़ने के लिए परिस्थितियों ने मुझे बाध्य कर दिया है, निम्न प्रकार है:

"कि अनुच्छेद 254 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:

'254. Notwithstanding anything in article 253 of this Constitution—

(a) sixty-two and a half per cent, or such higher percentage as may be prescribed of the net proceeds in each year of any export duty on jute or jute-products, and

(b) seventy-five per cent, or such higher percentage as may be prescribed of the net proceeds in each year of any export duty on tea, shall not form part of the revenues of India but shall be assigned to the States in which jute or tea, as the case may be, is grown in proportion to the respective amounts of jute or tea grown therein.' "

[254. इस संविधान के अनुच्छेद 253 में किसी बात के होते हुए भी–

(क) प्रति वर्ष पटसन या पटसन से बने हुए सामान के निर्यात-कर का साढ़े बासठ प्रतिशत अथवा ऐसा अधिक प्रतिशत भाग जो निर्धारित किया जाये, तथा

(ख) प्रति वर्ष चाय के निर्यात-कर का 75 प्रतिशत अथवा ऐसा प्रतिशत भाग जो निर्धारित किया जाये,

भारत के राजस्व का भाग नहीं बनेगा, वरन् उन राज्यों को, जिनमें पटसन या चाय, जैसी भी स्थिति हो, उगाई जाती हो उस अनुपात से दे दिया जायेगा जिससे कि पटसन या चाय उसमें उगाई जाती हो।]

श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने एक संशोधन संख्या 72 प्रस्तावित किया है जो पटसन के विषय में है। जहां तक पटसन का संबंध है, मुझे कुछ अधिक नहीं कहना है, सिवाय इसके कि आसाम सरकार को आजकल जो अनुदान दिया जाता है वह कम नहीं करना चाहिये। मैं यह इसलिये कहता हूं कि नये प्रस्ताव में, परिस्थितियों के दबाव से अथवा अधिक महत्वपूर्ण प्रांतों से अधिक जोरदार मांग होने पर, यह सर्वथा संभव होगा कि आसाम प्रांत की अवहेलना कर दी

जाये और उसे यथेष्ट भाग न मिले; अर्थात पटसन-शुल्क के परिवर्धित भाग को और भी कम कर दिया जाये। मेरी तो यही इच्छा है कि माननीय डॉ. अम्बेडकर ने जो संशोधन रखा है उसका प्रभाव यह नहीं हो कि प्रांत को अब जो पटसन-शुल्क मिल रहा है वह कम कर दिया जाये।

मैं इस सदन का ध्यान इस मामले की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं कि सारे प्रांतों को जो चाय का उत्पादन करते हैं, जिनमें आसाम भी सम्मिलित है, चाय के निर्यात-शुल्क का एक भाग मिलना चाहिये, जो कि इस समय सारा ही भारत सरकार अपने काम में ले लेती है।

मेरे माननीय मित्र गोपीनाथ बारदोलोई ने उस दिन अपने बलपूर्ण तथा प्रकाशयुक्त वक्तृता में आसाम प्रांत का जो दु:खद चित्र खींचा था उसके आगे मुझे कुछ खास नहीं कहना है। श्री निकलस राय ने भी उनका अनुसरण करते हुए सदन के समक्ष यह सिद्ध करके दिखा दिया कि यदि आसाम प्रांत के वित्तों को सुधारने का प्रयत्न नहीं किया गया, तो किसी वक्त वह ढांचा टूट सकता है। मैं यह कहने के लिये तैयार हूं कि ध्यान से देखा जाये तो घाटे की राशि उससे अधिक होगी जितनी कि हमें प्रत्याशा है। मुझे आशा है कि इस सदन के मेरे माननीय सदस्यों को यह स्मरण होगा कि आसाम भारत का एक प्रांत है जिसका क्षेत्रफल लगभग 50 हजार वर्गमील है और जन-संख्या 74-75 लाख है। प्रांत का राजस्व केवल 3½ करोड़ है और उन्हें इस समय भारत सरकार से जो सहायता मिलती है उसे मिलाकर कुल आय 5 करोड़ रुपये है। मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से कहता हूं कि वे इस बात पर विचार करें कि विद्यमान परिस्थितियों में, जबकि सब चीजों के मूल्य बढ़ रहे हैं, क्या इतने से कोष से इतने बड़े क्षेत्र का प्रशासन चलाना संभव है जिसमें कि सब प्रकार की मिश्रित जनसंख्या हो? क्या ऐसी थोड़ी सी आय से, जो कि हमें प्रांत से प्राप्त होती है, प्रशासन चलाना तथा उसमें सुधार करना संभव है? मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से कहता हूं, जो कि मैंने अपने लोगों से भी कहा है कि एक क्षण यह विचार करें कि क्या इस प्रांत को भारत सरकार के एक भाग के रूप में चलाना लाभदायक होगा? मैं अन्य प्रांतों के लोगों से यह विचार करने के लिए कहता हूं कि क्या उन्हें भारत के इस गले सड़े अंग को रखना है या—यदि उन्हें प्रांत से कोई सहानुभूति हो तो—वे अपनी आय का कुछ भाग छोड़ देंगे तथा भारत सरकार जो आय प्राप्त करती है उसका बड़ा अंश उस प्रांत को दे देंगे तथा उस गले सड़े अंग की मरम्मत कर देंगें? यदि वे ऐसा करने के अनिच्छुक है तो यह अधिक अच्छा है कि उस अंग को काट दिया जाये जिससे कि उस अंग का प्रभाव भारत के अन्य प्रांतों पर तो न पड़े। इस सदन को इस पर विचार करना है।

यह पहले ही इतने प्रभावी तरीके से कहा जा चुका है कि जितना कि मैं कह भी नहीं सकता-और मैं उसे दोहराना नहीं चाहता—कि आपको इसका विनिश्चय करना है। आप आसाम को अपने साथ रखना चाहते हैं या नहीं? यदि आप आसाम को अपने साथ रखना चाहते हैं तो क्या आप अपने राजस्व से कुछ खर्च करने के लिए तैयार हैं? क्या आप ऐसा करने के लिए तैयार हैं और आसाम को ऐसा प्रांत बनाना चाहते हैं जैसा कि वह होना चाहिये—एक संपन्न प्रांत, एक अग्रसर प्रांत, ऐसा प्रांत जिसमें शक्तिशाली लोग हों, जिसमें शिक्षित लोग हों, जिसमें ऐसे लोग हों जो साम्यवाद को रोक सकें, क्योंकि वही स्थान है जहां से साम्यवाद शेष भारत

में फैल रहा है? आसाम वह मार्ग है जहां से साम्यवाद फैल रहा है। क्या आप इस प्रांत को ऐसे असामाजिक तत्वों और आंदोलनों पर पनपने देंगे? अथवा आप इस प्रांत को ऐसी स्थिति में रखने जा रहे हैं कि वह ठीक मार्ग पर विकसित हो सके, वह अपनी जनता को संतुष्ट रख सके, वे उन्हें शेष भारत के सामान शिक्षित बना सके और शेष भारत के सामान प्रगतिशील बना सके, जिससे कि वे लोग स्वयं साम्यवाद के विरुद्ध उठ खड़े हों तथा भारत के उस सीमान्त की रक्षा करने में भाग ले सकें? इस प्रश्न पर इस सदन के माननीय सदस्यों को विचार करना है। यदि वे उन्हें शुल्क का भाग देना नहीं चाहते, वरन् भारत का केन्द्र ही उसे व्यय करेगा, और उन्हें चिंता नहीं है कि आसाम में क्या होगा, तो वे मामले को वैसे ही छोड़ सकते हैं और परिस्थितियां ऐसी हो जायेंगी कि आसाम को रखना कठिन हो जायेगा। या तो वह पाकिस्तान प्रांत का भाग बन जायेगा या उसे एशिया की कोई और साम्यवादी शक्ति हड़प कर लेगी। मैं देख सकता हूं कि भविष्य में यही होगा। मुझे यही आश्चर्य है कि भारत के अधिक चतुर लोग इस बात को क्यों नहीं सोच सकते। ऐसी हालत होती जा रही है कि यदि शेष भारत कुछ त्याग करके उस प्रांत की सहायता नहीं करेगा तो वह प्रांत अवश्य भारत में से निकल जायेगा। इसका कोई इलाज नहीं है।

मैं समझता हूं कि आसाम के लोग कभी-कभी प्रांत के बाहर से आने वाले लोगों के विरुद्ध बहुत सी भावना प्रदर्शित करते हैं। किसी हद तक मुझे यह कहते हुए शर्म आती है कि प्रांत के कुछ लोग इस हद तक चले गये हैं कि वे उन लोगों के प्रति सहानुभूति का अभाव प्रदर्शित करते हैं जो कि प्रति के बाहर से वहां शरण लेने आते हैं। इसका कारण यह है कि वे लोग अनुभव करते हैं कि शेष भारतवासी तथा भारत सरकार उस प्रांत का यथेष्ट ध्यान नहीं रखते, अत: उन्हें शेष भारत के प्रति कुछ असहानुभूति दिखाकर बदला लेना चाहिये। कुछ लोगों की यह भावना है। मैं उसका औचित्य सिद्ध नहीं कर रहा। साथ ही मैं उस प्रांत के संबंध में शेष भारत के व्यवहार को भी उचित नहीं कह सकता। मुझे यही कहना है।

यदि आप आसाम को अपने साथ रखना चाहते हैं, यदि आप शांतिपूर्ण भारत चाहते हैं, यदि आप भारत के सीमान्त की रक्षा करना चाहते हैं, तो आपको उस प्रांत पर अधिक ध्यान देना चाहिये, उसका अधिक ख्याल करना चाहिये और उस प्रांत को सुधारना चाहिये। आखिर, उस प्रांत की जनता का बहुत बड़ा भाग आदिमजातिय लोग हैं जिन्हें अब तक अंग्रेजी शासन के आधीन अपने भाई बन्धुओं से मिलने-जुलने नहीं दिया जाता था; उन्हें मैदानों के देशी लोगों से मिलने नहीं दिया जाता था। अत: उन लोगों को शेष भारत से कोई सहानुभूति नहीं हो सकती थी, क्योंकि वे शेष भारत से मिलने ही नहीं पाते थे। सब प्रकार के निर्बन्धन लगाये जाते थे और कुछ अब तक हैं। अब आपको आदिमजातीय लोगों को बदलना है और उन्हें भारत की नवीन राष्ट्रीयता की शिक्षा देनी है। वे भारत में हैं किंतु वे ऐसा अनुभव नहीं कर सके कि वे भारतीय हैं और वे यह अनुभव नहीं कर सके कि हमारा पर्वतों के उन भागों से कोई संबंध है जिनमें कि वे रहते हैं, और उनका उस भारत से कोई संबंध नहीं है जो हम दिल्ली, बम्बई, मद्रास तथा अन्य केन्द्रों में देखते हैं। फिर आप उन्हें यह अनुभव कराने के लिए क्या कदम उठाने जा रहे हैं? यदि आप कोई कदम उठाने जा रहे हैं तो आपको अधिक धन देना चाहिये। अधिक धन देने का क्या उपाय है? प्रांत अपने आप पर अधिक

कर नहीं लगा सकता। वे सीमा तक पहुंच चुके हैं। किसी प्रांत में कृषि कर लगने से बहुत पहले उस प्रांत में यह कर था। वास्तव में निर्धारित मार्ग पर चलने के लिए सब प्रकार के कर लगाये जा चुके हैं। उन्होंने यथासंभव सब विलास सामग्रियों पर कर लगा दिया है। उन्होंने भूमि पर अधिकतम कर लगा दिया है। अधिक संभव नहीं है। उस प्रांत में इससे अधिक धन संग्रह नहीं किया जा सकता। भारत को पेट्रोल तथा अन्य उत्पादन करों की लूट का अंश देना चाहिये। आसाम में रहने वाले अंग्रेजों ने भी उसे लूट ही समझा था। मिट्टी के तेल के शुल्क को भी लूट बताया गया है–प्रांत के लोगों ने ही नहीं, उस प्रांत में रहने वाले अंग्रेजों ने भी ऐसा कहा। उस प्रकार के भाषण दिये गये थे पर गत सरकार पर आलोचना का असर नहीं होता था, किन्तु आज वर्तमान सरकार के अंतर्गत हमें ऐसी व्यवस्था करनी है कि कमी वालों की सहायता की जाने और धनिकों की नहीं तथा अधिक शिक्षित लोगों की नहीं, ऐसे लोगों की नहीं जो कि अपनी चिंता आप ही कर सकते हैं। सहायता उनकी करनी है जो अपने साधनों को समाप्त कर चुके हैं। उन्हें भारत सरकार की ओर से कुछ समुचित सहायता मिलनी चाहिये। चाय के निर्यात कर में से जो कि इस समय सारा भारत सरकार ले लेती है, कुछ अंश की आशा करना उचित ही है। आसाम को चाय-शुल्क का भाग क्यों नहीं मिल सकता? चाय उस प्रांत में उत्पन्न होती है। जब भी आप चाय पीना चाहते है, तब आप अपने होटल वाले से या रसोई वाले से पूछते हैं कि यह आसाम चाय है या कोई और चाय और आप उसे चखते हैं और यदि वह आसाम की चाय हो तो आप अपने होठ चाटते हैं और कहते हैं "यह असली चाय का प्याला है जो जीवन का आनन्द है"। आप सब कुछ कहते हैं फिर भी उसके बाद आप सारा उत्पादन शुल्क ले लेते हैं। क्या आप क्षण भर के लिए सोचते हैं कि आसाम को इस चाय-उत्पादन के लिये कितनी बड़ी रकम देनी पड़ती है?

आसाम में बहुत एकड़ भूमि यूरोपीय बाग वालों के एकाधिकार में है। जहां कुछ सौ एकड़ भूमि पर चाय उगती है, वहां लगभग हजार एकड़ भविष्य में जोतने के लिये रखी हुई है। यह स्थायी प्रबन्ध है जो तत्कालीन सरकार ने किया था। दुर्भाग्यवश उस बेकार पड़ी भूमि को दूसरे लोग भी काम में नहीं ले सकते।

इन बगानों के अधिकांश श्रमिक बहुत कम मजदूरी पर आसाम प्रांत के बाहर से आते हैं, क्योंकि स्थानीय लोग उस मजदूरी पर काम करने के लिए तैयार नहीं हैं। भारत के अन्य भागों से लोगों को इन बगानों पर काम करने के लिए बुलाया जाता है। इसका अर्थ यह है कि इन बगानों पर मजदूरी के रूप में श्रमिकों को जो बड़ी राशि बांटी जाती है उसमें आसाम के लोगों को कोई भाग नहीं मिलता।

और इन बगानों से आसाम सरकार को भी कोई लाभ प्राप्त नहीं होता। मौलिक करार के अंतर्गत यूरोपीय बाग वालों को बहुत सी जमीन नाममात्र के किराये पर दे दी गई है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** क्या उसे अब बढ़ाया नहीं जा सकता?

श्री रोहिणी कुमार चौधरी: वह तो एक संविदे का भाग है। उसे बदलने के लिए कोई विधान अधियनियमित करना पड़ेगा।

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

मेरा कहना यह है। मेरी भूमि पर दूसरों का कब्जा है; मेरे मजदूरों को इन बगानों पर काम करने का अवसर नहीं मिलता। मैं जो चाय पीता हूं उसके लिये भी मुझे वही दाम देना होता है। मुझे पता लगा है कि भारत के बाहर चाय यहां से भी सस्ती बिकती है। यदि आपको हमसे इतना रुपया मिल रहा है, जिसके लिये आप मुझसे इतना त्याग करवाते हैं, जिसके लिये मुझे आप भूमि का प्रयोग नहीं करने देते जिसका अन्यथा अधिक अच्छे प्रयोजनों के लिए प्रयोग हो सकता था, यह सब कुछ करके भी आप मुझे लाभ में अंश क्यों नहीं देना चाहते? मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है कि मेरे पड़ौसी प्रांतों को भी इसका अंश मिल जाये। दुर्भाग्यवश डॉ. अम्बेडकर ने सदन में जो नया संशोधन पेश किया है, उसमें इस चाय के प्रश्न का कोई ख्याल नहीं रखा गया है। मेरी तो यही शिकायत है। इसलिये मेरा सुझाव है कि चाय के विषय में पटसन के समान ही उपबन्ध कर देने चाहिये और आप हमें निर्यात-शुल्कों का भाग दें। भारत सरकार अब लालची सरकार सिद्ध हुई है और प्रांत के सारे निर्यात-शुल्क को उसने ले लिया है। मुझे आशा है अब भी मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से यह कह सकता हूं कि वे देखें कि आसाम प्रांत के साथ न्याय किया जाये। यदि पटसन-उत्पादन का लाभ बिहार, बंगाल, आसाम और उड़ीसा को मिल सकता है तो चाय-उत्पादन का लाभ आसाम को प्राप्त क्यों न हो? मैं आसाम का समर्थन करके इन सब प्रांतों का भी समर्थन कर रहा हूं।

इन शब्दों के साथ मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि यदि वे आसाम प्रांत को भारत अधिराज्य में रखना चाहते हैं तो उस प्रांत में अधिक दिलचस्पी लें। आखिर, आप हमारे ज्येष्ठ भ्राता हैं। आप हमसे अधिक प्रगतिशील हैं—दुनियां तो यही कहती है, यद्यपि मैं इसे पूरी तरह स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं हूं। कुछ भी हो, सरकार के प्रशासन में आपकी आवाज बड़ी है। अपने स्वार्थ के लिये ही, अपनी रक्षा के लिये ही, आपको हमारा ख्याल करना चाहिये।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** अध्यक्ष महोदय, डाक्टर अम्बेडकर के संशोधन से दो प्रश्न होते हैं, पटसन-शुल्क के निर्यात की आय को भारत सरकार और प्रांतों में बांटने का औचित्य तथा कमी वाले प्रान्तों को पर्याप्त अनुदान देने का प्रश्न। मैं नहीं जानता कि श्री रोहिणी कुमार चौधरी ने इस पर क्या कहा, पर मुझे विश्वास है कि अन्य सब वक्ता इस विषय में विशेषज्ञ समिति से सहमत थे। उन्होंने मान लिया कि निर्यात-शुल्क की आय पर किसी प्रान्त को अधिकार नहीं है। कुछ सदस्यों ने यह भी मांग की है कि पटसन के निर्यात-शुल्क के समान केन्द्र चाय के निर्यात शुल्क का भी भाग कुछ प्रान्तों को दे। किन्तु यदि उस सिद्धांत को उचित स्वीकार कर लिया जाये कि निर्यात-शुल्क की आय केन्द्र के पास ही रहनी चाहिये, तो उस मांग का कोई आधार नहीं रह जाता। मैं डॉ. अम्बेडकर से सहमत हूं कि सीमान्त-शुल्कों के समान निर्यात-शुल्क भी शुद्धत: केन्द्रीय विषय है और सारी आय केन्द्र के पास ही रहनी चाहिये। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि कमी वाले प्रान्तों को सहायता नहीं मिलनी चाहिये। मेरे माननीय मित्र पंडित लक्ष्मीकांत मैत्र ने बंगाल के लिए बहुत पैरवी की है और बताया है कि बंगाल के लिये, केन्द्र से सहायता प्राप्त किये बिना अपना खर्च चलाना असम्भव है। उन्होंने विशेषज्ञ समिति के प्रतिवेदन से उद्धरण दिये हैं, किन्तु वे एक वाक्य पढ़ना भूल गये जो बंगाल, बिहार, आसाम तथा उड़ीसा जैसे प्रान्तों के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है;

यह वह वाक्य यह है:

"दस वर्षों के अंत में भी, जिनमें हम समझते हैं कि प्रान्त अपने साधनों का पर्याप्त विकास कर सकते हैं, प्रान्तों को राजस्व की यह हानि पूरी करने के लिए सहायता की अपेक्षा होगी।"

अर्थात्, केन्द्र द्वारा समस्त निर्यात-शुल्क को रखने के कारण जो हानि होगी उसे पूरा करने के लिए—

"हां, उनके लिये यह रास्ता है कि वे केन्द्र से सहायता-अनुदान मांगें, जिन पर कि यथा समय वित्त आयोग द्वारा उनके गुणावगुण को देखकर विचार किया जायेगा।"

मैंने यह वाक्य बंगाल तथा आसाम जैसे प्रान्तों के प्रतिनिधियों को संतुष्ट करने के लिए कहा है जिन्होंने उन प्रान्तों के साथ उदार व्यवहार करने का अनुरोध किया है। इसमें संदेह नहीं है कि इन प्रांतों को केन्द्र से सहायता की आवश्यकता है; किन्तु यह सहायता पाने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वे पटसन के निर्यात-शुल्क में से अथवा किसी और निर्यात-शुल्क में से भाग मांगे। केन्द्र इन शुल्कों को रख सकता है और फिर भी नैतिक रूप में उन प्रान्तों की सहायता करने के लिए बाध्य हो सकता है जो कि सारवान केन्द्रीय अनुदानों के बिना अपने आयव्ययक का संतुलन नहीं कर सकते। निस्संदेह ये प्रान्त केन्द्रीय सरकार के समक्ष तथा जब वित्त आयोग हो जाये तब उसके समक्ष अपनी मांगें पेश कर सकते हैं। मेरे विचार में, वित्त आयोग प्रान्तीय आय-व्ययकों पर गौर करेगा तथा यह देखेगा कि प्रान्तों ने किस हद तक अपनी सहायता आप करने का प्रयत्न किया है। वह यह भी निश्चय करना चाहेगा कि प्रान्त अपने राजस्व को बढ़ाने के लिए अपने साधनों का पूर्ण उपयोग करने का उचित प्रयत्न कर रहे हैं; और यदि इन बातों का परीक्षण करने के पश्चात् उसे यह विश्वास हो जायेगा कि केन्द्रीय अनुदान मांगने वाले किसी प्रान्त को केन्द्र से सहायता प्राप्त होनी चाहिये, तो वह निस्संदेह वैसी ही सिफारिश कर देगा: अत: ऐसी आशंका नहीं होनी चाहिये कि यदि निर्यात शुल्क पूर्णत: केन्द्रीय विषय बन जायेंगे तो इस समय निर्यात-शुल्क का अंश पाने वाले प्रान्तों को कुछ नहीं मिलेगा। मैं नहीं समझता कि ऐसा हो सकता है। मेरे माननीय मित्र पंडित लक्ष्मीकांत मैत्र ने डॉ. अम्बेडकर से पूछा है कि यदि वित्त आयोग तुरन्त नियुक्त नहीं होगा तो क्या होगा। डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में लिखा है कि अनुच्छेद 254 में 'विहित' शब्द का वही अर्थ है जो अनुच्छेद 251 में है। पंडित लक्ष्मीकांत मैत्र ने इस सम्बन्ध में यह भी पूछा कि यदि वित्त आयोग तत्काल ही नियुक्त नहीं हुआ तो क्या बंगाल और तीन अन्य प्रान्त जो अब पटसन-निर्यात-शुल्क का अंश पा रहे हैं, अपने साधनों पर ही रह जायेंगे। यदि वे या कोई अन्य सदस्य जिसे इस प्रश्न में रुचि हो अनुच्छेद 251 में 'विहित' की परिभाषा देखेगा तो उसे पता लग जायगा कि इसका अर्थ है कि:

"जब तक वित्त आयोग गठित न हो जाये तब तक राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा विहित; तथा वित्त-आयोग के गठित हो जाने के पश्चात् वित्त-आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा विहित।"

अत: यह स्पष्ट है कि चाहे वित्त-आयोग नियुक्त हो या न हो, चारों सम्बद्ध प्रान्तों को पटसन के निर्यात-शुल्क की आय में से सुनिश्चित राशियां मिल जायेंगी,

या अधिक ठीक कहा जाये तो उन्हें भारत की संचित निधि में से ऐसी राशियां मिल जायेंगी जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा विहित करे; वित्त-आयोग की नियुक्ति पर कुछ भी निर्भर नहीं है।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** राष्ट्रपति किस सिद्धांत पर अंश नियम करेगा?

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** भारत सरकार वित्त-आयोग को आज्ञा नहीं दे सकती कि वह क्या करे। मेरा अनुमान है कि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने यह सुझाव कि 'विहित' शब्द का वही अर्थ होना चाहिये जो अनुच्छेद 251 में है, इसलिये दिया है कि जिससे भारत सरकार पर यह दोष न लगाया जा सके कि उसने अपने पक्ष में एकपक्षीय विनिश्चय कर लिया है। यह मामला पूर्णत: वित्त-आयोग के विनिश्चय के लिये छोड़ दिया गया है। भारत सरकार वित्त-आयोग के लिए यह विनिश्चय नहीं कर सकती कि वह किन सिद्धान्तों पर चले। यदि भारत सरकार ऐसा करे तो सम्बद्ध प्रान्त उसे निस्संदेह महान अन्याय की दोषी बतायेंगे।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** मैंने यह बात नहीं कही। मैंने कहा, वित्त-आयोग के प्रतिवेदन की अनुपस्थिति में राष्ट्रपति किन सिद्धान्तों के अनुसार प्रान्तों का भाग निश्चिय करेगा?

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** यह मैं नहीं कह सकता, किन्तु स्पष्ट है कि राष्ट्रपति को सम्बद्ध प्रान्तों की आवश्यकताओं पर विचार करना पड़ेगा। मैं अत्यन्त बलपूर्वक तथा अत्यन्त स्पष्ट रूप से कह देता हूं कि, मेरे विचार में, चाहे किसी प्रान्त को निर्यात-शुल्क का भाग मिले या न मिले, यदि वह केन्द्र से सहायता पाये बिना अपने आय-व्ययक को संतुलित न कर सके तो केन्द्र उसे सहायता देने के लिए नैतिक रूप में बाध्य होगा।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** यदि सरकार ऐसा आश्वासन दे देती है, तो बस बिल्कुल ठीक है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** सरकार ऐसा आश्वासन दे या न दे, किन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि केन्द्रीय विधान-मंडल केन्द्रीय सरकार को प्रान्तों की आवश्यकताओं की उपेक्षा नहीं करने देगा। मेरे माननीय मित्र केन्द्रीय विधान-मंडल के सदस्य हैं। यदि केन्द्रीय सरकार ऐसा मनमाना विनिश्चय कर दे जो कि उनके प्रान्त के प्रति स्पष्टत: और बिल्कुल अन्यायपूर्ण हो तो क्या वे चुप रहेंगे? और, यदि केन्द्रीय सरकार का विनिश्चय बिल्कुल अन्यायपूर्ण होगा तो मुझे विश्वास है कि बंगाल का समर्थन करने वाले केवल वे ही एक सदस्य नहीं होंगे; सदन का प्रत्येक न्यायप्रिय सदस्य उसका समर्थन करेगा और उसके लिये अपेक्षित वित्तीय सहायक दिलवायेगा।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** बहुत-बहुत धन्यवाद।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन के खंड (3) को, जिससे यह भ्रांति उत्पन्न हुई है, छोड़ दिया जाये। यदि इस अनुच्छेद में 'विहित' शब्द को उसी प्रकार परिभाषित नहीं किया

जाता जैसे कि वह अनुच्छेद 251 में परिभाषित है, तो कोई हानि नहीं होती। मैं तो अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर को अब भी सुझाव देता हूं कि वे अपने प्रस्तावित संशोधन के खंड (3) को हटा दें। किन्तु केवल यही कारण नहीं है कि मैं यह सुझाव दे रहा हूं। एक और भी कारण है कि मैं उनसे कह रहा हूं कि उन्होंने जो संशोधन रखा है उसमें से वे 'विहित' शब्द की परिभाषा को हटा दें। यह ठीक है कि वित्त-आयोग को, जब यह नियुक्त हो, प्रान्तों की आवश्यकताओं पर विचार करना चाहिये। उसे यह विचार करना चाहिये कि उन्हें अपने साधारण व्यय को पूरा करने के लिए कितने सहायक-अनुदानों की आवश्यकता है। यह भी ठीक है कि उसे यह भी विचार करना चाहिये कि उन्हें राष्ट्रनिर्माण के कार्यों के लिए, उदाहरणार्थ, शिक्षा, लोक-स्वास्थ्य तथा कृषि के विकास के लिये, कितना धन व्यय करना चाहिये। यह भी समान रूप से ठीक है कि उसे उनके द्वारा तैयार की हुई उद्योग-विकास की योजनाओं पर विचार करना चाहिये, और इन सब बातों पर विचार करने के पश्चात् केन्द्र को सिफारिश करनी चाहिये कि प्रत्येक कार्य के लिए कितना धन देना चाहिये और यह भी निश्चय करना चाहिये कि केन्द्र या प्रान्त या दोनों द्वारा उधार लेकर कितना धन प्राप्त करना चाहिये। पर मैं इसे वांछित नहीं समझता कि आयोग केन्द्र को यह कह सके कि वह राजस्व के किसी साधन विशेष को छोड़ दे या प्रान्तों को उसमें से अंश दे दे। उसे यह अधिकार है कि वह प्रान्तों की आवश्यकताओं पर विचार करे तथा इस विषय पर ऐसी सिफारिशें करे जैसी कि वह ठीक समझे। केन्द्रीय सरकार उन सिफारिशों पर विचार करेगी और, जैसा मैंने उस दिन कहा था, मुझे आशा है कि एक परिपाटी बन जायेगी कि सरकार को साधारणतया, अर्थात् आपातस्थिति के अतिरिक्त, आयोग की सिफारिशों को स्वीकार कर लेना चाहिये। किन्तु यदि आयोग को किसी राजस्व को प्रान्तों तथा केन्द्र के मध्य बांटने के विषय में सिफारिशें करने की अनुमति दे दी जायेगी तो कठिनाई पैदा हो सकती है। भारत सरकार के लिये आयोग की ऐसी सिफारिशें स्वीकार करना शायद संभव न हो और ऐसी हालत में ऐसी परिपाटी की स्थापना, जो मैं चाहता हूं, होने में कठिनाई हो जाये। इसके अतिरिक्त कोई भी आयोग भारत सरकार के उत्तरदायित्व का पूरा मूल्य नहीं आंक सकता। भारत सरकार का उत्तरदायित्व बहुत विषयों में है, उनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण भारत की सुरक्षा है। अतः यह विनिश्चय करना उसी के हाथ में होना चाहिये कि राजस्व का कोई आगम उसके और प्रान्तों के बीच बंटे या नहीं। यदि प्रान्तों को दिये जाने वाले अनुदान काफी हैं, और उन्हें प्रति वर्ष अनुदान मिलते जायें, यदि दूसरे शब्दों में प्रान्तों को बड़े आवर्तक व्ययों में केन्द्र से सहायता मिलती रहे तो, शायद यह वांछनीय दिखाई दे कि केन्द्रीय सरकार, बड़े-बड़े अनुदान देने के स्थान पर प्रान्तों को राजस्व का कोई अंश दे दे। किन्तु, अन्यथा, मैं नहीं समझता कि भारत सरकार के लिए ऐसा करना अभीष्ट होगा। श्रीमान्, इन कारणों से मेरा यह मत है कि अनुच्छेद 254 में डाक्टर अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन का खंड (2) हटा दिया जाना चाहिये।

***अध्यक्षः** मेरे ख्याल में आपका मतलब खंड (3) से है?

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** हां, श्रीमान्, खंड (3) ही है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा अनुच्छेद 254 पर प्रस्तावित संशोधन का खंड (3) ही हटाया जाना चाहिये। उससे

कोई हानि नहीं होगी। यदि राष्ट्रपति किसी समय आयोग की सहायता लेना चाहे तो वह उस मामले को अनुच्छेद 260 के खंड (3) के उप-खंड (ख) के अधीन उसके पास भेज सकता है। उस अनुच्छेद के अंतर्गत, यदि डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित अनुच्छेद 254 का खंड (3) हटा भी दिया जाये तो भी राष्ट्रपति को आयोग से यह पूछने की शक्ति होगी कि राजस्व का कोई विशेष अंग प्रान्तों और केन्द्र के बीच बंटना चाहिये या नहीं, किन्तु मेरे विचार में यह सब प्रकार से अभीष्ट है कि पूर्णतः केन्द्रीय राजस्व के तत्काल या सन्निकट भविष्य में बांटने के प्रश्न पर आयोग को विचार नहीं करना चाहिये, जब तक कि राष्ट्रपति उनसे इस विषय पर उसके विचार न पूछे। यह मामला तो केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों के बीच निबट जाना चाहिये। श्रीमान्, इन कारणों से मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड (3) हटा देना चाहिये। यदि आप मुझे उसकी अनुमति देंगे तो मैं इस आशय का प्रस्ताव भी पेश कर दूंगा। किन्तु यदि अब संशोधन रखने का समय ही नहीं रहा है, चाहे वह कितना ही औपचारिक हो तो मैं श्री शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन का समर्थन करूंगा जिसमें कहा गया है कि यह मामला संसद् द्वारा निर्धारित होना चाहिये। यदि वह स्वीकृत हो जायेगा तो खंड (3) स्वतः ही हट जायेगा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): मैं प्रस्ताव करता हूं कि प्रश्न पर अब मत लिये जायें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, यह अत्यन्त महत्वपूर्ण मामला है और अभी इस पर वाद-विवाद समाप्त नहीं होना चाहिये।

***अध्यक्षः** मैं पूर्णतः सदन की इच्छा पर चलूंगा। प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न पर मत लिये जायें।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मुझे एक औचित्य प्रश्न उठाना था?

अध्यक्षः औचित्य प्रश्न इस समय?

श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः मैं बहुत समय से प्रतीक्षा कर रहा था।

***अध्यक्षः** आपको अपना औचित्य प्रश्न पहले उठाना चाहिये था। अब तो औचित्य प्रश्न उठाने का समय जाता रहा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, वाद-विवाद का उत्तर देते हुए, मेरा यह विचार नहीं है कि विविध प्रान्तों के उन सदस्यों द्वारा इस सदन में अलापे गये दुःखद रागों का उत्तर दूं, जो यह अनुभव करते हैं कि भारत-शासन-अधिनियम 1935 के अन्तर्गत आदेशित राजस्व-वितरण में उनके साथ बुरा व्यवहार हुआ है। मेरा तो यही विचार है कि कुछ अधिक ठोस बातों का ही उत्तर दूं।

सर्वप्रथम मैं अपने मित्र प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन के विषय में एक शब्द कहना चाहता हूं। वे चाहते हैं कि अनुदान, राष्ट्रपति द्वारा नियत न होकर संसद् द्वारा नियत हों। अब, पिछली बार, अन्य वित्तीय अनुच्छेदों पर बहस के समय मैंने कहा था कि वितरण के मामले में संसद् को घसीटने का हमारा विचार नहीं है, क्योंकि हम यह नहीं चाहते कि राजस्व-वितरण विविध प्रान्तों के बीच रस्सा-कसी का मामला बन जाये या विभिन्न प्रान्तों के प्रतिनिधियों के बीच विवाद का विषय बन जाये। हम चाहते हैं कि इस मामले को राष्ट्रपति या वित्त-आयोग की मंत्रणा पर राष्ट्रपति, विनिश्चित कर दे। यही कारण है कि मैं प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूं।

फिर मैं अपने मित्र, श्री मैत्र द्वारा उठाये गये विषय को लेता हूं। उनकी पहली युक्ति यह थी कि उन्हें कोई ऐसा कारण दिखाई नहीं देता कि इस समय मस्विदा समिति एक संशोधन लाकर मूल अनुच्छेद को क्यों बदलना चाहती है। मुझे विश्वास है कि वे वित्त सम्बन्धी विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों का निर्देश करना भूल गये। यदि वे उन्हें देखें, तो, मेरे विचार में, वे मुझसे सहमत होंगे कि विशेषज्ञ समिति ने ही यह सिफारिश की थी कि पटसन-शुल्क अथवा पटसन के सामान के शुल्क को वितरित करने की पद्धति को बदल देना चाहिये। अतः यह मस्विदा समिति की इच्छा का प्रश्न नहीं था कि मूल अनुच्छेद में परिवर्तन किया जाये।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्रः** उन्होंने प्रतिकर का भी निर्देश किया है।

***माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकरः** मैं उस पर भी आता हूं। मस्विदा समिति ने केवल यही स्वीकार नहीं किया कि वित्त सम्बन्धी विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाई गई राशियां ही उन प्रान्तों को दी जायें जो कि पटसन के निर्यात-शुल्क में अपना भाग खो बैठेंगे। मस्विदा समिति ने यह अनुभव किया कि शायद विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाये गये आंकड़ों पर और विचार करने की आवश्यकता है। विशेषज्ञ समिति को बहुत कम समय मिला था, यह बात ध्यान में रखते हुए मस्विदा समिति यह निश्चय नहीं कर सकी कि विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाये गये आंकड़ों को वह और गौर किये बिना स्वीकार कर सकती है। इसी आशंका के कारण मस्विदा समिति ने, विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाये गये आंकड़ों को स्वीकार करने के स्थान पर, अपने ही सूत्र को स्वीकार कर जो अब नये अनुच्छेद में दिया गया है, कि पटसन-शुल्क की हानि के प्रतिकार के स्थान पर सहायक अनुदानों को राष्ट्रपति विहित करेगा। अतः मस्विदा समिति की यह इच्छा कदापि नहीं थी कि इस अनुच्छेद विशेष में उल्लिखित चार प्रान्तों से राजस्व का कोई उचित साधन छीन लिया जाये, जिसमें यह कहा जा सकता है कि उनका निहित अधिकार है, और न मस्विदा समिति ने उन आंकड़ों में कोई मुलभूत परिवर्तन ही करने का प्रयत्न किया है, जो कि विशेषज्ञ समिति द्वारा सुझाये गये थे। उन्होंने तो केवल इतना ही किया है कि यह मामला राष्ट्रपति पर छोड़ दिया है।

अब, मेरे मित्र, पंडित हृदयनाथ कुंजरू ने कहा है कि सदन के समक्ष पेश अनुच्छेद में 'विहित' शब्द की परिभाषा प्रविष्ट करके मस्विदा समिति ने गलती की है। उन्होंने आगे चलकर यह भी कहा कि पिछले एक अनुच्छेद 260 में

भी, जो कि हमने पारित किया है 'विहित' शब्द नहीं होना चाहिये। अब चाहे उनके सुझाव का मूल्य कुछ भी हो पर मुझे 'विहित' शब्द की परिभाषा के बिना काम चलाना कुछ कठिन प्रतीत होता है। हमने अनुच्छेद 254 के मुख्य भाग में कहा है कि सहायक-अनुदान ऐसे होंगे जो कि विहित किये जायेंगे। अब, कोई भी वकील यह जानना चाहेगा कि 'विहित' शब्द का क्या अर्थ है। या तो हमें 'विहित' शब्द की विशेष परिभाषा रखनी होगी तो कि अनुच्छेद 254 के उपबन्धों तक सीमित हो या हमें अनुच्छेद 260 के उन उपबन्धों को बदलना होगा जिनमें 'विहित' शब्द परिभाषित है।

***अध्यक्षः** शायद आप 251 का निर्देश कर रहे हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मुझे खेद है। मैं अशुद्ध बोल गया, 251 ही है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मस्विदा समिति ने 'विहित' शब्द की दो परिभाषायें रखने का सुझाव दिया है। 'विहित' की एक परिभाषा का यह अर्थ है कि राष्ट्रपति द्वारा विहित जबकि उसके समक्ष वित्त आयोग का प्रतिवेदन न हो, और 'विहित' शब्द ही दूसरी परिभाषा तब 'विहित' की गई है जबकि राष्ट्रपति के समक्ष वित्त आयोग की सिफारिशें हों। मस्विदा समिति को 'विहित' शब्द की दो भिन्न-भिन्न परिभाषायें देनी पड़ी हैं उसका कारण यह है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रान्त यह चाहते हैं कि पटसन-शुल्क का ही नहीं पर राजस्व के अन्य साधनों का भी जो वितरण संविधान के अन्य अनुच्छेदों के अन्तर्गत उपबन्धित किया गया है वही नहीं रहना चाहिये, क्योंकि उनकी यह शिकायत है कि उन्हें जो अंश दिया जा रहा है वह न पर्याप्त है और न न्यायपूर्ण ही है और उनका पुनरीक्षण अपेक्षित है। स्पष्टतः, यदि वितरण तत्काल नहीं हो सकता जिससे कि वह वितरण संविधान के प्रारम्भ पर ही आरम्भ हो सके, तो स्पष्ट है कि वह वितरण वित्त आयोग की सिफारिशों के बिना राष्ट्रपति द्वारा ही किया जा सकता है, क्योंकि चाहे केन्द्रीय सरकार कितनी ही शीघ्रता क्यों न करे पर संविधान के आरम्भ तक आयोग नियुक्त होकर उसका प्रतिवेदन प्राप्त नहीं हो सकता। परिणामतः हमें 'विहित' शब्द की दोहरी परिभाषा रखनी पड़ी है। सर्वप्रथम राष्ट्रपति वित्त आयोग की सिफारिश के बिना विहित करेगा। हां, इसका यह अर्थ नहीं है कि राष्ट्रपति मनमानी करेगा। इसका यह अर्थ नहीं है कि राष्ट्रपति अपने मंत्रि-मंडल की मंत्रणा पर ही कार्यवाही करेगा जो कि प्रान्तों के मुकाबले में केन्द्र की स्थिति को सुरक्षित और मजबूत बनाना चाहते हैं। मेरे ख्याल में केन्द्रीय सरकार का यह विचार है और मैं इस मामले को सुस्पष्ट कर देना चाहता हूं कि केन्द्रीय सरकार का एक समिति सी नियुक्त करने का विचार है, जो एक विशेषज्ञ समिति अथवा विशेषज्ञ अधिकारी होगा, हां, वह संविधान के प्रयोजन के लिये आयोग नहीं होगा, जो इस पर विचार करेगा तथा मालूम करेगा कि क्या विद्यमान वितरण, केवल पटसन और पटसन के सामान के शुल्क के वितरण का ही नहीं, वरन् राजस्व के अन्य साधनों की आय के वितरण का भी पुनरीक्षण करने की आवश्यकता है जिससे कि प्रान्त और प्रान्त के बीच तथा केन्द्र और प्रान्तों के बीच न्याय हो सके। परिणामतः जब राष्ट्रपति का पहला आदेश निकलेगा तब, जैसेकि मैंने कहा है, राष्ट्रपति मनमाने

ढंग से अथवा केन्द्र की कार्यपालिका की मन्त्रणा पर ही नहीं चलेगा, वरन् वह किसी स्वतन्त्र व्यक्ति के किसी विशेषज्ञ के अभिप्राय के आधार पर कार्य करेगा। उसके बाद जब आदेश का पुनरीक्षण करने का प्रश्न उठेगा। तब यह प्रश्न उठेगा कि क्या राष्ट्रपति को संसद् की मंत्रणा पर कार्यवाही करनी चाहिये अथवा अपनी ही मंत्रणा पर कार्यवाही करनी चाहिये अथवा उसे वित्त-आयोग की मंत्रणा तथा सिफारिश पर कार्य करना चाहिये जो कि संविधान के अंतर्गत नियुक्त होना है। जैसाकि मैंने कहा है ये तीन भिन्न-भिन्न विकल्प हैं जो हम स्वीकार कर सकते हैं। मैं जानता हूं कि मेरे माननीय मित्र, पंडित कुंजरू ने बिल्कुल सद्भाव से यह सुझाव दिया है कि राष्ट्रपति को स्वतंत्र होकर कार्यवाही करनी चाहिये और वित्त-आयोग की सिफारिशों के अनुसार ही नहीं चलना चाहिये। एक और मत है, जिसके प्रतिनिधि मेरे माननीय मित्र, प्रोफेसर सक्सेना हैं, कि राष्ट्रपति को वित्त-आयोग की सिफारिश पर भी कोई वितरण नहीं करना चाहिये जब तक कि संसद उसकी स्वीकृति न दे दे। जैसाकि मैं कह चुका हूं इन दोनों तरीकों में त्रुटियां है। मैं नहीं समझता कि वितरण के विषय में सिफारिश करने के लिए एक आयोग नियुक्त करने के पश्चात्, राष्ट्रपति के लिये यह उचित होगा कि उस आयोग की सिफारिशों की सर्वथा अवहेलना कर दे, अपनी ही इच्छानुसार चले तथा वितरण कर दे। मेरे विचार में ऐसा करना तो आयोग के प्रति अनादर प्रदर्शित करना होगा। जैसाकि मैं कह चुका हूं, संसद पर इस मामले को छोड़ देने का तीसरा विकल्प मुझे जोखम से भरा हुआ दीखता है, जिसमें प्रान्तीय विवाद, तथा प्रान्तीय ईर्ष्यायें अन्तर्ग्रस्त होंगी। अतः मैं यह कह सकता हूं कि मस्विदा समिति ने मध्यवर्ती मार्ग चुना है, कि यद्यपि इस मामले पर संसद् में वाद-विवाद हो सकता है, पर राष्ट्रपति जो कार्यवाही करे उसमें वह वित्त आयोग की सिफारिशों पर चले और मनमाने ढंग पर नहीं चले। मुझे आशा है कि सदन इसे स्वीकार कर लेगा। यही तीनों तरीकों का युक्तियुक्त मध्य-मार्ग है और यही इस मामले को निबटाने का सर्वोत्तम उपाय है।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि उपर्युक्त संशोधन संख्या 72 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 254 के खंड (1) में 'by the President' इन शब्दों के स्थान पर 'by Parliament by law' शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 254 के स्थान पर, निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:

पटसन या पटसन से बनी वस्तुओं पर निर्यात शुल्क के स्थान में अनुदान

'254. (1) पटसन या पटसन से बनी हुई वस्तुओं पर निर्यात शुल्क के प्रत्येक वर्ष के शुद्ध आगम के किसी भाग को आसाम, उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल और राज्यों को सौंपने के स्थान मे उन राज्यों के राजस्व में सहायक अनुदान के रूप में प्रत्येक वर्ष में भारत की संचित निधि पर ऐसी राशियां भारित की जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति द्वारा विहित की जायें।

(2) पटसन या पटसन से बनी हुई वस्तुओं पर जब तक भारत सरकार कोई निर्यात शुल्क उद्गृहीत करती रहे अथवा इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की समाप्ति तक, इन दोनों में से जो भी पहिले हो उसके होने तक, इस प्रकार विहित राशियां भारत की संचित निधि पर भारित बनी रहेंगी।

(3) इस अनुच्छेद में 'विहित' पद या वही अर्थ है जो इस संविधान के अनुच्छेद 251 में है।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 254 संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 254 संविधान में जोड़ दिया गया।

नया अनुच्छेद 254-क

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 254-क को लेंगे।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** एक औचित्य प्रश्न है। श्रीमान्, औचित्य प्रश्न यह है कि संशोधन संख्या 82, जो एक नये अनुच्छेद 254-क को रखने के विषय में है, बिल्कुल नई चीज़ है। हम सदन में पहले विनिश्चय कर चुके है कि संविधान में संशोधन एक निश्चित तारीख तक ही पेश किये जाने चाहिये। हम अपने संशोधन पेश कर चुके हैं। नियमों के अनुसार संविधान में और संशोधन पेश नहीं किये जा सकते। अब केवल वे ही संशोधन पेश हो सकते हैं जो मूल संशोधनों पर संशोधन हों या नियमित संशोधनों पर संशोधन हों। मेरा निवेदन है कि विद्यमान संशोधन किसी संशोधन से संबद्ध नहीं है। मैंने संशोधन-सूची को अच्छी तरह देख लिया है, मूल मुद्रित सूची को भी और दूसरी सूचियों को भी, और इसका किसी संशोधन से भी सम्बन्ध नहीं है। इसके अतिरिक्त संशोधन की भाषा ऐसी है कि यह किसी संशोधन से सम्बद्ध नहीं है वरन् एक स्वतंत्र प्रस्ताव है। इसमें लिखा है कि "अनुच्छेद 254 के पश्चात् निम्न रख दिया जाये"। इसमें किसी संशोधन का कोई निर्देश, सम्बन्ध या विषय नहीं दिया गया है, न ऐसा करने की कोशिश ही की गई है। मेरा निवेदन है कि, श्रीमान् यह संशोधन इस प्रकार प्रविष्ट नहीं किया जा सकता।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** निस्संदेह मेने माननीय मित्र द्वारा उठाया गया प्रश्न वैध है, पर मेरा निवेदन है कि इस मामले में आपको असीम स्वविवेकाधिकार है कि किसी संशोधन की अनुमति दे दें यदि वह संशोधन महत्वपूर्ण हो।

***अध्यक्ष:** मेरे ख्याल में पिछले मौकों पर भी हमने नये संशोधनों को प्रविष्ट करने की अनुमति दी है और यह नया अनुच्छेद है जिसे अनुच्छेद 254 के पश्चात् प्रविष्ट करना है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** जब आपने मस्विदा समिति को काम करने की अनुमति दी है तो उसका कर्तव्य है कि लगातार संविधान के मस्विदे पर गौर करती रहे और यदि वे देखें कि कोई कमी रह गई है, तो, समिति का अस्तित्व है, इसी कारण उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि उस कमी को पूरा करने के लिए कदम उठाये। विद्यमान संशोधन उसी आवश्यकता के कारण पेश किया गया है।

***अध्यक्ष:** पिछले मौकों पर मैंने नये अनुच्छेदों को पेश करने की अनुमति दी है, और यह एक नया अनुच्छेद है जो अनुच्छेद 254 के पश्चात् रखा जाना है, और मैं इसकी अनुमति देता हूं। डॉ. अम्बेडकर, आप संशोधन को पेश कर सकते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 254 के पश्चात्, निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:

राज्यों के हितों से सम्बद्ध करों पर प्रभाव डालने वाले विधेयकों के लिए राष्ट्रपति की पूर्व सिफारिश की अपेक्षा

'254-क. (1) कोई विधेयक या संशोधन, जो, जिस कर या शुल्क में राज्यों का हित सम्बद्ध है, उसको आरोपित या परिवर्तित करता है, अथवा जो भारत आयकर से सम्बद्ध अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिये परिभाषित 'कृषि आय' पदावलि के अर्थ को परिवर्तित करता है, अथवा जो उन सिद्धान्तों का प्रभावित करता जिनसे कि इस अध्याय के पूर्ववर्ती उपबन्धों में से किसी के अधीन राज्यों को धन वितरणीय हैं या हो सकेंगे, अथवा जो संघ के प्रयोजन के लिये ऐसा कोई अधिभार आरोपित करता है जैसा कि इस अध्याय के पूर्ववर्ती उपबन्धों में वर्णित है, राष्ट्रपति की सिफारिश के बिना संसद् के किसी सदन में न तो पुर:स्थापित और न प्रस्तावित किया जायेगा।

(2) इन अनुच्छेदों में 'जिस कर या शुल्क में राज्यों का हित सम्बद्ध है' पदावलि से अभिप्रेत है:

(क) कोई कर या शुल्क जिसका शुद्ध आगम पूर्णत: या अंशत: किसी राज्य को सौंप दिया जाता है, अथवा

(ख) कोई कर या शुल्क जिसके शुद्ध आगम के निर्देश से भारत संचित निधि में से तत्समय किसी राज्य को राशियां दी जानी हैं।' "

श्रीमान्, मैं एक या दो कारणों का उल्लेख कर देना चाहता हूं, जिनसे कि हमने अंत समय में यह अनुभव किया कि यह नवीन अनुच्छेद संविधान में प्रविष्ट कर देना चाहिये। ऐसा ही एक उपबन्ध भारत शासन अधिनियम में है। मस्विदा समिति ने इस मामले पर विचार किया। उन्होंने इस अनुच्छेद को नये संविधान में रखना या स्थानान्तरित करना आवश्यक नहीं समझा। पर जब मुख्य मंत्रियों का

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

सम्मेलन हुआ था तब यह सुझाव दिया गया था कि ऐसा अनुच्छेद लाभदायक रहेगा और शायद आवश्यक ही है, क्योंकि एक बार संसद् प्रान्तों और राज्यों में धन-वितरण कर दे तो फिर किसी गैर-सरकारी सदस्य को यह अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह एक विधेयक पेश करके ऐसे मामलों में गड़बड़ या परिवर्तन कर दे जिनमें कि प्रान्त का हित सम्बद्ध हो। इसी कारण मस्विदा समिति ने अब यह संशोधन रखा है जिससे कि प्रान्तों को यह आश्वासन दे दिया जाये कि वितरण के विषय में कोई परिवर्तन नहीं किया जायेगा जब तक कि ऐसे विधेयक की राष्ट्रपति सिफारिश न कर दे।

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद पर कोई संशोधन नहीं है। यदि कोई सदस्य बोलना चाहता है तो वह ऐसा कर सकता है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैंने जो पारिभाषिक आपत्ति उठाई थी, उसके अतिरिक्त मेरी एक और आपत्ति है, कि यह भी प्रांतीय क्षेत्र को छीनने की कोशिश का एक और उदाहरण है। मैं इस अनुच्छेद का केवल एक और उदाहरण देना चाहता हूं यह अनुच्छेद संसद् को अप्रत्यक्ष रूप से यह शक्ति देता है कि वह 'कृषि आय' पदावलि की परिभाषा भी बदल सकती है। मेरे ख्याल में यह सुविख्यात है कि कृषि और कृषि-आय प्रान्तीय विषय हैं। यह बहुत समय से, 1935 के अधिनियम से, यह प्रान्तीय विषय है। यह तो विद्यमान संविधान के मस्विदे की योजना भी है कि कृषि आय और कृषि विषय प्रान्तीय विषय है। फिर, अनुच्छेद 303 खंड (1), उपखंड (क) को लेते हैं तो "कृषि-आय का अर्थ है भारतीय आय-कर से सम्बद्ध अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिये परिभाषित कृषि-आय"। यही परिभाषा भारत शासन अधिनियम 1935 में भी स्वीकृत हुई थी। आय-कर अधिनियम में दी हुई कृषि-आय की परिभाषा को आधार माना गया था। उससे केन्द्र और प्रान्तों की सीमा का पता लगता था। भारत शासन अधिनियम में वास्तव में भारतीय आय-कर अधिनियम की इस परिभाषा को ले लिया गया है और इसे सदा के लिये स्पष्ट कर दिया है जहां तक कि संविधान का सम्बन्ध है कि आय-कर का क्या आशय है। यदि हम अब आय-कर का मतलब बदलना चाहें तो परिणाम यह होगा कि कृषि-आय जो प्रान्तीय मामला है और प्रान्तीय विषय है वह बहुत कम हो जायेगा। संसद् परिभाषा को आसानी से बदल सकती है और आसानी से कह सकती है "कृषि आय वह आय है जो कृषि से नहीं होती"। संसद् को ऐसा करने से कोई रोक नहीं सकता है। संविधान के मस्विदे के विद्यमान उपबन्धों से संसद् ऐसा नहीं कर सकती थी। यह नया अनुच्छेद इसे सुधार कर परिवर्तन करना चाहता है। अब कृषि आय का अर्थ कुछ भी हो सकता है और शायद कुछ भी न हो। इसका अर्थ वही होगा जो कि संसद् चाहे। यह एक और तरीका है, एक और उदाहरण है कि हम प्रान्तों के अधिकारों को कैसे कम कर रहे हैं। मैं इस प्रयत्न के हानिकारक परिणामों की पहले ही चर्चा कर चुका हूं। हम पिछले अनुच्छेद में यह रुख देख ही चुके हैं और हम पटसन-कर तथा अन्य करों को कम कर ही चुके हैं। वास्तव में अनुच्छेद के मूल मस्विदे के अधीन पटसन-शुल्क सब प्रान्तों को, जिनमें कि पटसन उगती है, अनुपात से दिया जाता। पर अब सारी बात ही बदल गई है; यह दूसरा

परिवर्तन है। मेरा निवेदन है, श्रीमान्, कि यदि हम विद्यमान अनुच्छेद को पारित कर दें, जिसमें संसद् का यह अधिकार भी निहित हो कि वह 'कृषि-आय' इस पदावली का अर्थ बदल सकती है और उसका रूपभेद कर सकती है, तो हम कृषि-आय की परिभाषा बदलने के लिए आपकी अनुमति प्राप्त करने के लिए बाध्य हो जायेंगे। यदि आप संसद् के हाथ में सब शक्ति एकत्र करने का काम अवैज्ञानिक ढंग से, आक्रमणात्मक ढंग से आरम्भ करेंगे, तो इस प्रयत्न का कोई अन्त नहीं होगा। मैं इन सब अनुच्छेदों में सब स्थानों पर यही प्रयत्न देखता हूं।

मैं जानता हूं कि मेरी सारी युक्तियों का परिणाम बिल्कुल कुछ नहीं होगा; अतः मैं केवल अपना सविनय विरोध प्रदर्शित कर देता हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान्, इस अनुच्छेद का यह भावार्थ है कि जिन करों के विषय में राज्यों का हित सम्बद्ध है उन्हें संसद् में पेश करने के लिए राष्ट्रपति की पूर्वसम्मति अपेक्षित है।

मैं इस उपबन्ध का उस आधार पर विरोध नहीं करना चाहता जिस आधार पर मेरे पूर्व वक्ता माननीय सदस्य ने इसका विरोध किया है। किन्तु मैं उस सिद्धान्त को चुनौती देना चाहता हूं जिस पर यह आधारित है। वास्तव में अनुच्छेद 97 में, जो कि हमने पारित किया है, संसद के सदस्यों की शक्ति धन विधेयकों या उनके संशोधनों के विषय में निर्बन्धित कर दी गई है। मेरे समझ में नहीं आता कि इस अनुच्छेद द्वारा संसद् में सदस्यों की ऐसे विधेयक पेश करने की शक्ति को निर्बन्धित क्यों किया जाये जो कि ऐसे करारोपण के सम्बन्ध में है जिसमें कि राज्यों का हित सम्बद्ध है।

संसद् के सदस्यों को ऐसे विधेयक स्वयं ही पेश करने की, जिनसे ऐसे करों पर प्रभाव पड़ता हो जिनमें राज्यों का हित सम्बद्ध हो, जो अनुमति नहीं दी जा रही है, वह संसद् सदस्यों के जन्माधिकार का उल्लंघन है। उन्हें ऐसे विधेयक पेश करने की अनुमति क्यों न दी जाये, जिनमें उनके राज्यों का हित सम्बद्ध है? यदि संसद् का बहुमत उसके विरुद्ध होगा तो वह विधेयक गिर जायेगा, पर सदस्यों को ऐसा विधेयक पेश करने से निर्बन्धित क्यों किया जाये? किन्तु यदि कोई सदस्य यह अनुभव करे कि एक विशेष कर-पद्धति से उसके प्रान्त पर प्रभाव पड़ता है अथवा वह उचित या न्यायपूर्ण नहीं है, तो उसे पूरा अधिकार होना चाहिये कि वह उस दृष्टिकोण को संसद् के समक्ष पेश कर सके। हो सकता है कि वह ऐसे दल का सदस्य हो जो कि विरोधी पक्ष हो और सरकार वह विधेयक पेश न करे? अतः मैं समझता हूं कि यह अनुच्छेद संसद् के सदस्यों के जन्माधिकार का उल्लंघन है और मैं इसे रखने का कोई कारण दिखाई नहीं देता। यदि यह पारित हो जाये तो इसका यह अर्थ होगा कि कोई सदस्य अपने प्रान्त के लाभार्थ कोई विधान विधेयक के रूप में पेश नहीं कर सकता। यदि कोई ऐसा करे जो उसके प्रान्त पर बुरा प्रभाव डालता हो तो वह उसका निरसन नहीं करवा सकता। उसे वह राष्ट्रपति के समक्ष पेश करना होगा तथा उसका यह अर्थ होगा कि कार्यपालिका की इच्छा है कि उसे पेश करने दे या न करने दे। यह संसद्

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

के सदस्यों के अधिकारों पर बड़ी भारी सीमा है और इसे स्वीकार नहीं करना चाहिये।

***अध्यक्ष:** क्या आप बोलना चाहते हैं, डॉ. अम्बेडकर?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे ख्याल में कोई उत्तर आवश्यक नहीं है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि नया अनुच्छेद 254-क संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 254-क संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 255

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 255 को लेते हैं।

(संशोधन संख्या 83 पेश नहीं किया गया।)

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 255 में, 'revenues of India' इन शब्दों के स्थान पर जहां भी वे हों, 'Consolidated Fund of India' ये शब्द रख दिये जायें।"

"कि अनुच्छेद 255 के प्रथम उपबन्ध में, 'for the time being specified in Part I of the First Schedule' ये शब्द हटा दिये जायें।"

"कि अनुच्छेद 255 के दूसरे उपबन्ध के खंड (क) में, 'three years' इन शब्दों के स्थान पर 'two years' ये शब्द रख दिये जायें।"

पहले दो संशोधन बिल्कुल औपचारिक हैं.....

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** एक औचित्य प्रश्न है। संख्या 86 बिल्कुल नया है और किसी से सम्बद्ध नहीं है। यह औपचारिक बात नहीं है। यह एक गम्भीर मामला है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यही तो मैं समझाने का प्रयत्न कर रहा हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** यह किसी संशोधन का संशोधन नहीं है। यह तो संविधान में ही संशोधन है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैंने इसे सभापति की अनुमति से पेश किया है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं चाहता था कि डॉ. अम्बेडकर इसे पेश करने के लिये सभापति की अनुमति लेने के लिए बाध्य हों।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैंने उनकी अनुमति ले ली है। इसे पेश करने से पहले या बाद में कभी भी अध्यक्ष इसकी अनुमति दे सकते हैं।

यह मामला अनुदानों के विषय में है और मूल अनुच्छेद में भी यही उपबन्ध है कि आसाम को तीन वर्ष की औसत राशि दी जाये। हमें यह बताया गया कि यदि तीन वर्ष की औसत ली गई तो आसाम सरकार को बहुत कम मिलेगा क्योंकि पहले वर्ष में उन्होंने कुछ भी व्यय नहीं किया, पर यदि दो वर्षों की औसत ली जाये तो उन्हें अधिक मिलेगा। इस कठिनाई को दूर करने के लिये ही मस्विदा-समिति ने 'तीन वर्ष' के स्थान में 'दो वर्ष' ये शब्द रख दिये हैं।

(संशोधन संख्या 87 पेश नहीं किया गया।)

***सैयद मुहम्मद सादुल्ला** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जहां तक वित्तीय उपबन्धों का सम्बन्ध है, संविधान के मस्विदे के पिछले अनुच्छेदों के पारित होने से प्रान्तों की सब आशाओं और आकांक्षाओं पर पानी फिर गया है, केवल निर्धन प्रान्तों की ही नहीं, वरन् धनी प्रान्तों की भी आशाओं पर। मैं यह बात उस ज्ञापनों को पढ़ने के पश्चात् कह रहा हूं जो वित्तीय विशेषज्ञ समिति को पेश किये गये थे जिसके अध्यक्ष श्री एन.आर. सरकार थे, जो आजकल बंगाल के कार्यवाहक मुख्यमंत्री हैं। यदि कोई उस ग्रन्थ को देखने की चिन्ता करता, जो कि सभा कार्यालय ने दिया था, तो वे देखते कि प्रत्येक प्रान्त, चाहे उसकी आय तीन करोड़ हो, चाहे 50 करोड़ हो, आय-कर के विभाजनीय कोष का पुनरीक्षण चाहता था। वे चाहते थे कि निगम-कर को आय-कर के विभाजनीय कोष में समाविष्ट कर लिया जाये। उन्होंने सिफारिश की है कि किसी प्रान्त विशेष में उत्पन्न सब वस्तुओं पर उत्पादन कर तथा सब निर्यात-शुल्क भी विभाजनीय कोष में मिला देने चाहियें। आसाम के प्रतिनिधि सदन के समक्ष जो दु:ख कथा—डॉ. अम्बेडकर के शब्दों में—पेश करते रहे हैं वह कोई नई बात नहीं है, जैसाकि मैं उन ज्ञापनों से निर्देश देकर बताऊंगा। भारत अधिराज्य का सबसे धनी प्रान्त भी—मेरा मतलब मद्रास से है—ये सब बातें चाहता था जो आसाम के प्रतिनिधि केन्द्र से मांगते थे।

श्रीमान्, मैं मस्विदा-समिति के सदस्य के रूप में नहीं बोल रहा हूं, वरन् आसाम के अत्यन्त दु:खी प्रान्त के प्रतिनिधि के रूप में बोल रहा हूं। मैं उन माननीय सदस्यों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूं, जो कि गत शुक्रवार को बोले थे, अर्थात पंडित हृदयनाथ कुंजरू, श्री बी. दास. तथा प्रोफेसर सक्सेना के प्रति जिन्होंने कि केन्द्र से आसाम को न्यायपूर्ण भाग दिलाने के दावे का समर्थन करने की कृपा की थी। यदि मेरे माननीय मित्र मेरी बात को सुनेंगे तो मुझे पूरा विश्वास है कि वे हमारे लिये वैसी ही सहानुभूति तथा समर्थन प्रदर्शित करेंगे—और जो कुछ मैं कहूंगा मैं संविधान सभा द्वारा दिये गये लेख्यों से उद्धरण देकर कहूंगा। यह एक सुखद संयोग है कि संविधान-सभा ने कल प्रत्येक सदस्य को दो पुस्तिकायें दी हैं पर जो राष्ट्र विभाग की ओर से निकली हैं और जिनमें आसाम के अपवर्जित

[सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

तथा अंशत: अपवर्जित भागों तथा उत्तर-पूर्वी सीमावर्ती आदिमजातीय तथा अपवर्जित क्षेत्रों का विशद वर्णन है। क्योंकि समय इतना कम है, मैं नहीं समझता कि माननीय सदस्यों को इन पुस्तिकाओं को पढ़ने का समय मिला होगा, या क्या मैं कह सकता हूं, इच्छा हुई होगी। अत: मैं आपको आसाम की स्थिति का शब्द चित्र दूंगा, केवल उसकी धरातल-रचना तथा भौगोलिक स्थिति का ही नहीं वरन् उसकी आर्थिक, राजनैतिक तथा वित्तीय स्थिति का भी।

आसाम की धरातल-रचना को मैं सदा निर्धन की कुटिया के समान बताया करता हूं यह चोटी पर पहाड़ी के समान है जिसके दोनों और दो ढलान वाली छतें हैं। हमारी पश्चिमी सीमा से, अर्थात् पूर्वी पाकिस्तान में मैमनसिंह जिले से, आसाम में पूर्व की ओर एक ऊंची पहाडियों की शृंखला ठीक उस स्थान तक जाती है जहां तिब्बत, चीन और बर्मा की शृंखलायें मिलती हैं। यह पर्वत शृंखला प्रान्त को दो घाटियों में विभाजित करती है जिनके नाम इस पुस्तिका में ये लिखे हैं—उत्तर की ओर ब्रह्मपुत्र घाटी तथा दक्षिण की ओर सूरमा घाटी। सिलहट जिले के विभाजन के समय से, जिसके कुछ अंश पूर्वी पाकिस्तान में चले गये है, उस घाटी को बरक घाटी कहना चाहिये क्योंकि जो नदी इस क्षेत्र के दो भाग करती है उसे बरक कहते हैं। अब एक ओर महान् ब्रह्मपुत्र द्वारा तथा दूसरी ओर छोटी सी बरक नदी द्वारा इस घाटी के विभाजन से आसाम प्रान्त के लिये समस्यायें पैदा हो गई हैं तथा उसके बढ़े हुए खर्च तथा कष्टों को उसने और भी बढ़ा दिया है। यदि हमें ब्रह्मपुत्र के उत्तरी तट पर कोई लाभदायक कार्य करना हो, जैसे बड़ी सड़क बनानी हो तो दक्षिणी तट पर भी एक बड़ी सड़क होनी चाहिये जिससे दक्षिणी तट के निवासियों को सुविधा हो। ऐसी ही हालत दूसरी घाटी में है। इसके अतिरिक्त, आपके मिलये तथा आसाम के मेरे मित्र लोगों के लिये भी यह नई बात होगी, जो आसाम के प्रतिनिधि हैं और जिन्होंने यह कहा था कि विभाजन के पश्चात् आसाम का क्षेत्रफल केवल 50,000 वर्ग मील है, उन लोगों के लिए भी यह नई बात होगी, पर मैं कहता हूं कि परराष्ट्र विभाग द्वारा निकाली गई इस पुस्तिका का पहला ही वाक्य इस प्रकार है–"आसाम और उससे सम्बद्ध क्षेत्रों का क्षेत्रफल लगभग 1,00,000 वर्ग मील है"। जब आप इस विस्तृत क्षेत्र का विचार करें, जिसकी जनसंख्या केवल 73 लाख है, तो आपको पता लगेगा कि गहन जनसंख्या वाले प्रान्तों की अपेक्षा प्रत्येक प्रशासनीय प्रयोजन के लिये, दंडाधीश के न्यायालय से लेकर थाने तक के विषय में, हमारा प्रशासन अधिक खर्चीला होगा ही। मैं आपके समक्ष एक तथ्य, आसाम के वित्त मंत्री के प्राधिकार से पेश कर सकता हूं, जिन्होंने गत मार्च में आसाम में विधान-सभा में अपने आय-व्ययक की प्राक्कलनें पेश करते समय कहा था कि हमारे कुछ राजस्व का 72 प्रतिशत वेतनों के भुगतान में चला जाता है। यदि प्रान्तीय राजस्व का इतना बड़ा भाग लगभग तीन-चौथाई सार्वजनिक सेवकों के वेतनों पर खर्च हो जाता है, तो क्या आश्चर्य है कि विकास के लिये या किसी अन्य सामाजिक सेवा के लिए बहुत कम बचता है। कोई आश्चर्य नहीं है, श्रीमान् कि आसाम उन सब सुविधाओं की व्यवस्था करने में इतना पिछड़ा हुआ है जो कि कुशल और पूर्णत: स्वायत सरकार में होती है। इस समय आसाम भारत अधिराज्य का निर्धनतम प्रान्त

है, साधनों में निर्धन नहीं, संख्या में निर्धन है, वित्तीय स्थिति में निर्धन है और अपनी जनता की आर्थिक हालत के विषय में निर्धन है। पर यह निर्धनता मनुष्य-निर्मित विधियों के कारण तथा केन्द्रीय सरकार के अन्याय के कारण उस पर थोपी गई है। 1911 के मिन्टो-मोरले सुधारों के कार्यकाल में भारत की वित्तीय स्थिति ऐसी थी कि केन्द्रीय सरकार एकात्मक सरकार के रूप में कृत्य करती थी और भारत के सब राजस्वों का खर्च करती थी। प्रान्तों को जो कुछ आवश्यकता थी वह केन्द्र से मिल जाता था। वह कुछ सहनीय था, यद्यपि निर्बल आसाम तत्कालीन सरकार पर कभी यह प्रभाव नहीं डाल सका था कि उसकी सामाजिक सुविधाओं और सेवाओं को बढ़ाने के लिये कुछ और मिलना चाहिये। तब मौनटेग-चेम्सफोर्ड सुधारों के कार्यकाल में आसाम के निर्धन प्रान्त के साथ सर्वाधिक अन्याय किया गया। प्रत्येक को स्मरण होगा कि उस सुधार-योजना में, वित्तीय व्यवस्था यह थी कि राजस्व के कुछ शीर्षक प्रान्तों को दे दिये जाते थे और शेष अन्य केन्द्र को; और लार्ड मेस्टन ने, विचित्र गणित द्वारा, या तो आसाम की हालत को ठीक न समझने के कारण या आसाम के प्रतिनिधियों द्वारा उनके समक्ष आसाम का मामला पेश करने में लापरवाही करने के कारण यह हिसाब लगाया कि आसाम कमी वाला प्रान्त तो था ही नहीं वरन् ऐसा लाभ वाला प्रान्त था कि वह केन्द्र को प्रति वर्ष पन्द्रह लाख दे सकता था। किन्तु पता लगा कि ये सब बिल्कुल गलत था और तथ्यों से असम्बद्ध था। आसाम को 25 लाख रुपये प्रति वर्ष तक का घाटा रहता था, पर फिर भी आसाम को 16 लाख रुपये देने पड़ते थे, जिससे उनका घाटा प्रति वर्ष बढ़ता जाता था, आखिर 1927 में आसाम परिषद् के आन्दोलन के परिणामस्वरूप आसाम का यह भार हटा दिया गया था।

अब मैं साइमन सुधार योजना पर आता हूं जबकि आसाम ने अपना ज्ञापन तैयार करके आयोग के समक्ष पेश किया था—उसे मैंने ही तैयार किया था क्योंकि मैं उस समय आसाम सरकार का वित्त सदस्य था। हम अकाटय आंकड़ों द्वारा यह सिद्ध करने के लिए तैयार थे कि आसाम की वह स्थिति नहीं हो सकती कि वह बड़े प्रान्तों की तरह चलाया जा सके—उन संस्थाओं को बढ़ाने की तो बात ही छोड़िये जो प्रत्येक स्वशासित प्रान्त में होनी चाहिये। साइमन आयोग के साथ जो संघीय वित्त-समिति लार्ड यूस्टेस परसी के सभापतित्व में बैठी थी उसे अपने प्रतिवेदन में यह स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ा था कि आसाम को उसका आयव्ययक संतुलित करने के लिए 67 लाख रुपये की सहायता मिलनी चाहिये। इस लेख्य पर संयुक्त संसदीय समिति तथा गोलमेज सम्मेलन के समय इंगलिस्तान में एक और समिति ने विचार किया, जिसके अध्यक्ष लार्ड पील थे। उस समिति को भी यह स्वीकार करना पड़ा कि कुछ प्रान्त—और उन्होंने ये शब्द प्रयोग किये "विशेषत: आसाम तथा उड़ीसा" बड़े प्रान्तों के रूप में काम नहीं चला सकते जब तक कि उन्हें कुछ समय के लिए सारवान सहायता न दी जाये। इन असंदिग्ध क्षेत्रों की सिफारिशों के रहते हुए, मैं नहीं कह सकता कि किस गणित कला के द्वारा, सर ओटो नीमियर इस निष्कर्ष पर पहुंच गया कि आसाम को 30 लाख रुपये की सहायता पाकर पूर्णत: संतुष्ट हो जाना चाहिये। यह सबसे निर्दयतापूर्ण मजाक है जो आसाम जैसे निर्धन प्रान्त के साथ किया जा सकता था,

[सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

क्योंकि आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि आसाम केन्द्र के कोष में प्रति वर्ष 10 करोड़ रुपये देता है और हमें वार्षिक सहायता के रूप में 30 लाख रुपये की छोटी सी रकम मिलती है।

मैं अभी आकड़े देता हूं। यदि आसाम के सदस्यों को दु:खालाप अलापना पड़ा है तो उसका यह कारण है कि इन मनुष्य-निर्मित कार्यों से ही आसाम निर्धनतम स्थिति में है, उसमें स्वशासन की कम से कम संस्थायें हैं। किन्तु आसाम में प्राकृतिक साधनों की कमी नहीं है। यदि आसाम को अपने रास्ते पर चलने दिया जाये तो वह भारत के सब प्रान्तों में सबसे आगे होता। धन की कमी होने पर भी आसाम भारत भर में साक्षरता के मामले में चौथा है। इससे पता चलता है कि हम अपेक्षाकृत धनी प्रान्तों के अनुपात से अधिक शिक्षा पर व्यय करते रहे हैं। इसी प्रकार हम सड़क संचार के विषय में तीसरे हैं। कोई भी वर्ष के किसी भाग में आसाम के एक कोने से दूसरे तक मोटर द्वारा जा सकता है, यद्यपि वहां वर्षा अत्यधिक होती है। यह बात बहुत कम प्रान्तों में है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): क्या सीमांत प्रदेश में संचार का विकास हो गया है?

सैयद मुहम्मद सादुल्ला: हां, वहां पक्की सड़कें नहीं हैं पर सीमान्त के भीतरी भाग तक भी शीतकालीन मार्ग हैं। मैं स्वयं सदियों से, जो हमारा पूर्वी सीमान्त है, मोटर द्वारा निजामघाट तक पचीस मील गया हूं, जो कि बिल्कुल भीतरी भाग है, और दूसरी ओर पासीघाट नामक एक उपविभाग पचास मील पर है जहां आप मोटर द्वारा जा सकते हैं।

यदि हम अपने साधनों का प्रयोग कर सकते तो हम आसाम को भारत के प्रान्तों में सबसे आगे लाकर खड़ा कर देते। कौन से साधन? पेट्रोलियम और मिट्टी के तेल को लीजिये। आसाम ही एक प्रान्त है जो भारत अधिराज्य में उस मूल्यवान वस्तु को पैदा करता है। धरती माता के गर्भ में से जो करोड़ों रुपये का कच्चा तेल निकलता है उससे हमें केवल 5 लाख प्राप्त होते हैं, जबकि केन्द्रीय सरकार निर्मित वस्तुओं पर उत्पादन-शुल्क के रूप में लगभग 2 करोड़ रुपये प्रति वर्ष 20 वर्ष से या अधिक समय से प्राप्त कर रही है। हमने इसका भाग प्राप्त करने का यथाशक्य अधिकतम प्रयत्न किया। केन्द्रीय सरकार हठ करती रही और उस उत्पादन-शुल्क में से हमें एक पैसा भी नहीं मिला, यद्यपि यदि मुझे ठीक याद है तो—मैंने इस विषय पर 1929 में विचार किया है और पूरे बीस वर्ष हो गये—आस्ट्रेलिया अधिराज्य की ओर से प्रिवी परिषद में एक मामला था जिसमें यही प्रश्न उठा था और प्रिवी परिषद् ने विनिश्चय किया कि ऐसे उत्पादन शुल्क की आय राज्य को जानी चाहिये और इसका समुचित कारण है। आप कच्चे तेल से जितना पेट्रोल बनाते हैं उतना ही आप प्रान्त के प्राकृतिक साधनों और प्राकृतिक वैभव का ह्रास कर रहे हैं। यह उत्पादन कर पूंजी पर कर के समान है।

दूसरी बात, यह उद्योग बहुत लम्बे समय से साम्यवादी आंदोलन का लक्ष्य रहा है। कुछ माननीय सदस्यों को शायद अब भी स्मरण हो कि आसाम सरकार

को 1938 में बल-प्रयोग करना पड़ा था और डिगबोई में गोली चलानी पड़ी थी, जहां पेट्रोल उद्योग का केन्द्र है, जब कुछ लोग मारे गये थे। उस घटना के विषय में ऐसा आंदोलन हुआ कि तत्कालीन सरकार को—जो कांग्रेस सरकार थी, मेरी सरकार नहीं थी—बंगाल उच्च न्यायालय के निवत मुख्य न्यायाधिपति स्वर्गीय सर मन्मथनाथ मुखर्जी जैसे महान व्यक्ति की सेवाओं को प्राप्त करना पड़ा जिससे कि वे साक्ष्य लेकर पता लगायें कि गोलीकांड उचित था या नहीं। पेट्रोल के उत्पादन की रक्षा तो हर हालत में करनी ही है, जो कि इस सभ्यता के काल में ऐसी आवश्यक वस्तु है और जिससे केन्द्रीय कोष में एक बड़ी रकम राजस्व के रूप में आती है। और कोई आश्चर्य नहीं है कि आपने गत शुक्रवार को आसाम के माननीय मुख्य मंत्री से सुना है कि वे 1946 में सत्तारूढ़ हुए तब से उन्हें आरक्षी-बल को दुगना करना पड़ा। यदि आसाम सरकार अपनी थोड़ी सी आय को खर्च करके तेल-क्षेत्र की रक्षा न करे तो केन्द्र सरकार का क्या होगा? यदि कोई और बात न हो तो भी कम से कम इसी कारण आसाम उत्पादन-कर में अंश मांग सकता है कि हम उस राजस्व-साधन की रक्षा कर रहे हैं जिसका उपभोग केन्द्र करता है।

अब मैं पटसन को लेता हूं। श्रीमान्, संयुक्त संसदीय समिति में बंगाल के प्रतिनिधियों के प्रयत्नों के फलस्वरूप तत्कालीन सरकार इस सिद्धान्त को मानने के लिए बाध्य हो गई थी कि पटसन का उत्पादन करने वाले प्रान्तों को पटसन के निर्यात-शुल्क का भाग मिलना चाहिये। उस वर्ष—1934 में—यह समझा जाता था कि आसाम संसार भर के पटसन का 5 प्रतिशत उगाता है और उसी आधार पर उसे औसतन प्रति वर्ष 14 लाख रुपये मिलते थे। किन्तु स्वतंत्रता की घोषणा के समय से, जबकि बंगाल का बड़े से बड़ा पटसन-क्षेत्र पूर्वी पाकिस्तान के पल्ले पड़ गया, तब से संसार के पटसन के उत्पादकों में आसाम का स्थान बहुत ऊंचा हो गया। आसाम, जिसमें बहुत सी बेकार भूमि पड़ी है, प्रति वर्ष अपना पटसन-उत्पादन बढ़ा रहा है। और, यदि मुझे ठीक याद है तो अब आसाम भारत अधिराज्य के अधिकतम पटसन उत्पादक क्षेत्रों में बिहार से दूसरा है। प्रतिशत भाग का हिसाब ठीक करने से उस राशि पर आवश्यक प्रभाव पड़ा था जो आसाम को पटसन-निर्यात-शुल्क के रूप में मिली।

हमें शुक्रवार को आसाम के प्रधान मंत्री ने बताया कि हाल ही में (अर्थात् 1947-48 में) 14 लाख से बढ़कर आसाम का भाग 40 लाख हो गया था। किन्तु एक बंगाली कहावत है कि 'यदि दाता देना भी चाहे तो विधाता बीच में आकर उसे रोक देता है'। इसी प्रकार जब रोटी का ग्रास हमारे मुंह तक पहुंचा कि विद्यमान राष्ट्रीय भारत-सरकार ने उसे छीन लिया। जबकि पहले अंग्रेजी शासन में प्रान्तों को दिया हुआ प्रतिशत भाग 62½ प्रतिशत था, विद्यमान सरकार ने लेखनी के एक शब्द द्वारा उसे गत वर्ष घटाकर 20 प्रतिशत कर दिया। अब बंगाल के माननीय प्रतिनिधि ने कहा है कि पटसन एक ऐसी वस्तु है जिससे भारत के लिये अत्यावश्यक डालर विनिमय प्राप्त होता है। अब प्रान्तों को क्या प्रोत्साहन होगा कि वे अपने पटसन क्षेत्र को बढ़ायें अथवा पटसन की अधिक गांठे उगायें, यदि उन्हें इससे कुछ भी न मिले? अनुच्छेद 254 जो कि हमने अभी पारित किया है केवल एक रोटी का टुकड़ा ही है। यह कहना है कि दस वर्ष के लिये या उससे भी

[सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

पहले यदि सरकार पटसन निर्यात-शुल्क को समाप्त कर देना ठीक समझे तो इन चार प्रान्तों को एक-एक ग्रास मिल जायेगा। मैं कहता हूं, श्रीमान्, कि यदि प्रान्तों को अकेले छोड़ दिया जाता तो वे पटसन-उत्पादकों से कुछ अवश्य वसूल कर लेते। विगत में आसाम बहुत देशभक्त था और जब चाय पर निर्यात शुल्क या उत्पादन शुल्क नहीं लगाया गया था तब आसाम सरकार ने चाय उद्योग से प्रार्थना की थी कि वे स्वेच्छा से कर दिया करें और उस उद्योग ने बिना विरोध के स्वेच्छा से कृषि-कृत क्षेत्र पर प्रति एकड़ आठ आने का कर देकर एक सड़क-कोष बनाया और वह पद्धति 1927 से 1937 तक चलती रही।

अब मैं चाय को लेता हूं। जिन लोगों को चाय-उद्योग का पता नहीं है वे अनुमान नहीं लगा सकते कि आसाम ने विगत में कितना त्याग किया है, जो त्याग अब भी जारी है। आसाम का चाय उद्योग सौ वर्ष पुराना है और विदेशी पूंजी को आकृष्ट करने के लिए तथा जंगली जानवरों से भरे मलेरिया वाले जंगलों को साफ करने के लिए तत्कालीन आसाम सरकार को बस्तियां बसाने के लिये आसान शर्तें रखनी पड़ी। पहले के अनुदान करों से मुक्त थे अर्थात उन्हें आसाम सरकार को कोई लगान नहीं देना पड़ता। फिर 99 वर्ष का पट्टा दिया गया जिसमें सरकार ने लगान के रूप में प्रति एकड़ 4½ आने के लगभग की बहुत कम दर रखी, जबकि साधारण कृषक को लगभग 4 रुपये प्रति एकड़ देना होता है। अत: आसाम में चाय उद्योग को अत्यन्त स्थायी तथा दृढ़ बनाने के लिए आसाम सरकार ने लगान के रूप में असंख्य राशि का बलिदान किया। और अब जबकि केन्द्रीय सरकार बीच में आ गई है और भारत में आंतरिक प्रयोग के लिए बिकने वाली चाय पर 3 आना प्रति पाउंड उत्पादन कर तथा भारत के बाहर जाने वाली चाय पर 4 आना प्रति पाउंड निर्यात शुल्क लगाना आरम्भ कर दिया है, तब आसाम को उस राशि में से एक आना भी नहीं मिलता जो कि केन्द्रीय सरकार को प्राप्त होती है। औसतन आसाम प्रति वर्ष 35 करोड़ पाउंड चाय पैदा करता है। इसमें से तीन चौथाई भाग, भारतीय चाय नियंत्रण अधिनियम के अधीन बाहर भेजा जाता है, जिससे केन्द्रीय कोष में चार आने प्रति पाउंड शुल्क आता है। शेष एक चौथाई अंश आंतरिक मंडी में बिकता है और उससे तीन आने प्रति पाउंड मिलते हैं। अब 35 करोड़ पाउंड में से, जो ब्रिटेन की वार्षिक आवश्यकताओं के सन्निकट है, लगभग 30 करोड़ पाउंड वहां आसाम से ही जाता है। इससे केन्द्रीय सरकार को अत्यावश्यक स्टर्लिंग पूंजी प्राप्त होती है। अब औसत से प्रत्येक चाय बगान में एक हजार से दो हजार तक मजदूर होते हैं। साम्यवादी एजेन्ट उन्हें उनके उचित कर्तव्य से बहका कर हटा रहे हैं और उन्हें विद्रोह करने के लिए बाध्य कर रहे हैं। मान लीजिये आसाम सरकार यह सोचे की उन्हें कुछ नहीं मिल रहा है अत: उन्हें साम्यवादियों को श्रमिकों में गड़बड़ फैलाने से रोकने की कोई आवश्यकता नहीं है, तो चाय-उद्योग का क्या होगा और केन्द्रीय सरकार की स्टर्लिंग पूंजी का क्या होगा? पर फिर भी मानवनिर्मित विधियों ने आसाम को चाय के निर्यात-शुल्क और उत्पादन शुल्क में से कुछ भी प्राप्त नहीं होने दिया। फिर चाय उद्योग के लिये आसाम जो त्याग कर रहा है उसका पता इसी बात से लग सकता है कि आसाम के राजस्व का अधिकांश भाग भूमि के लगान से आता है; वह लगभग 1½ करोड़ है पर इन राशि में चाय-बगानों का भाग केवल 17 लाख है। यदि उन पूर्ववर्ती वर्षों में रियायती दरें न दी गई होतीं तो शायद चाय बगानों वालों

को लगान के रूप में कम से कम 75 लाख रुपये देने पड़ते। पर चाय-उद्योग के विषय में एक और भी दु:खद तथा हृदयविदारक बात है। आयकर के कोष में से विभिन्न प्रान्तों को अंश देने के बारे में केन्द्रीय सरकार की योजना अत्यधिक अन्यायपूर्ण, असमतापूर्ण तथा कलुषित है। किस हिसाब से सर ओटो नीमियर से आसाम के अंश को दो प्रतिशत निश्चित किया, यह मैं समझ नहीं पाता जबकि बंगाल और बम्बई को 20 प्रतिशत दिया गया और मद्रास तथा युक्तप्रान्त को 15 प्रतिशत मिला आदि। आसाम की लगभग एक हजार चाय जागीरों में से कोई 750 के प्रबन्धक आसाम के बाहर हैं—कोई 500 कलकत्ते में हैं और 150 लन्दन में हैं, क्योंकि वे सब विलायती समवाय हैं, और आसाम की चाय पर आय-कर या तो कलकत्ते में या लन्दन में भुगताया जाता है। कलकत्ते में जो राशि दी जाती है उसका लाभ बंगाल को मिलता है, इसी कारण उन्हें कुल वितरणीय कोष का 20 प्रतिशत प्राप्त होता है। यदि उस बात पर उचित विचार किया जाता तो कोष का वितरण दो आधारों पर होना चाहिये था, प्रथम राजस्व के स्रोत पर, और दूसरे उस क्षेत्र की आवश्यकताओं पर जो चाय उगाता है। मुझे फिर "चिकने सिर पर तेल डालने" की बंगाली कहावत का उदाहरण देना पड़ता है, इंजील में भी लिखा है "जिस के पास है उसे और मिलेगा"। गरीब आसाम और उड़ीसा अधिक सहायता पाने के लिए जोर से चिल्ला रहे हैं, पर अब भारत-विभाजन के पश्चात् इस कोष में बहुत प्रतिशत भाग दिया गया तब मद्रास को, जिसका राजस्व 50 करोड़ है 10 प्रतिशत मिला, अर्थात 3 प्रतिशत अधिक मिला, और बम्बई को 22 प्रतिशत मिला, किन्तु निर्धन आसाम और उड़ीसा को 1 प्रतिशत ही अधिक मिला। जब अवसर आया, तब भी इन गरीब प्रान्तों के साथ न्याय नहीं हुआ। यही कठिनाई बिहार के विषय में है। बिहार को दस प्रतिशत से कहीं अधिक प्रतिशत भाग मिल जाता यदि जमशेदपुर के टाटालोह कारखाने से प्राप्त आय को बिहार के प्रत्यय में लिखा जाता। किन्तु उनका मुख्य कार्यालय बम्बई में है इसलिये वे जो बड़ी रकम आयकर के रूप में देते हैं वह बिहार को न मिलकर बम्बई को मिलती है।

श्रीमान्, मैंने इन तथ्यों तथा आंकड़ों से यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि आसाम का दावा उस आय पर था और अब भी है जो कि चाय के निर्यात और उत्पादन शुल्कों से प्राप्त होती है और जो पटसन के निर्यात कर से या पेट्रोल के उत्पादन शुल्क से प्राप्त होती है। और जैसाकि मैंने आरम्भ में कहा है आसाम ही अकेला प्रान्त नहीं है जो इसका दावा कर रहा है। मैं विशेषज्ञ वित्त समिति के समक्ष पेश किये गये इन ज्ञापनों के पृष्ठ 9 पर देखता हूं कि मद्रास ने यह सिफारिश की है कि केन्द्र द्वारा आरोपित सभी निर्यात तथा उत्पादन शुल्कों में से प्रान्तों को भाग मिलना चाहिये। बम्बई चाहता है कि निगम-कर को भी आय-कर में शामिल करके प्रान्तों में बांट देना चाहिये। वह आय-कर के वितरणीय कोष में से 20 प्रतिशत पाकर भी संतुष्ट नहीं है और 33½ प्रतिशत मांगता है। फिर, युक्तप्रान्त—जनसंख्या में भारत का सबसे बड़ा प्रान्त—कहता है:

> "पहली आवश्यक बात यह है कि केन्द्र के करों के वितरणीय कोष को बढ़ाया जाये और प्रान्तों को आय-कर के अतिरिक्त भार का कम से कम आधा

[सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

भाग दिया जाये; निगम-कर और सब सम्बद्ध करों को आधे आय-कर के समान वितरणीय कोष में शामिल कर देना चाहिये। इसी प्रकार केन्द्र द्वारा आरोपित सभी उत्पादन तथा आयात-शुल्कों को भी कोष में शामिल कर लेना चाहिये।"

इस ज्ञापन के पृष्ठ 18 पर मैं देखता हूं कि बंगाल ने भी ऐसा ही दावा किया था। अत: यह स्पष्ट है कि केवल आसाम जैसा गरीब प्रान्त ही उत्पादन और निर्यात शुल्क का भाग पाने के लिए शोर नहीं मचाता था, वरन् अधिक धनी प्रान्तों ने भी उसका दावा किया है।

अब आसाम की इस समस्या पर आप दूसरे दृष्टिकोण से विचार करिये। यद्यपि आसाम भारत का एक अंग है पर वह परिस्थितियों वश शेष भारत से कट गया है। हमें, जिन्हें इस सभा में आना पड़ता है, पाकिस्तान राज्यक्षेत्र में से 180 मील चलना पड़ता है, तब हम भारत अधिराज्य के सीमान्त पर 'राणाघाट' नामक स्थान पर पहुंचते हैं। अत: केन्द्रीय सरकार उत्तरी तराई में से आसाम को सीधा रेलमार्ग तथा सड़क बनाने का प्रयत्न कर रही है। मुझे पता नहीं है कि कितने करोड़ रुपये खर्च होंगे और वह कब तैयार होगा; पर उन्होंने कुछ कार्यवाही की थी जिससे कि आसाम और शेष भारत का सम्बन्ध करने के लिए बंगाल के उत्तरी भाग में से जलपैगुरी के पास जो कि भारतीय प्रदेश है, छोटा सा रास्ता निकाल लिया जाये। किन्तु आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस मार्ग से हम बंगाल या कलकत्ता नहीं पहुंचते, वरन् बिहार पहुंचते हैं और यदि हम कलकत्ता जाना चाहें तो हमें 200 मील की रेलयात्रा और करनी पड़गी। उसका किराया भाड़ा कितना बैठगा, मुझे यह कहने की आवश्यकता नहीं है, सदन उसकी कल्पना कर सकता है। पर इस रेलमार्ग का प्रयोग कौन करेगा? मुझे पूरा विश्वास है कि कोई व्यापारी या यात्री स्वेच्छा से इसका प्रयोग नहीं करेगा। फिर, आसाम अब सीमान्त प्रान्त है। गत युद्ध में यह सिद्ध हो गया कि भारत पर पूर्व से आक्रमण हो सकता है। पूर्व से ही जापानी वास्तव में भारत भूमि पर आ गये थे जबकि उन्होंने आसाम में मनीपुर राज्य को घेर लिया था और नागा पर्वतों के मुख्य कार्यालय के तीन चौथाई पर कब्जा कर लिया था। आसाम भारत अधिराज्य का सीमांत प्रान्त है इस कारण वह अखिल-भारतीय विचार का प्रश्न है। क्योंकि यदि, आसाम पर उसके पड़ौसी आक्रमण कर दें और शेष भारत से वहां कुमक न भेजी जाये तो वह शीघ्र ही भारत का अंग नहीं रहेगा। क्या आप संतोष में मग्न रहकर ऐसी आकस्मिकता की कल्पना कर सकते हैं?

जैसाकि मैं आपको बता चुका हूं, नीमियर पंचाट के समय आसाम अविभक्त था और उसमें कोई उच्च न्यायालय नहीं था। यद्यपि वह बड़ा प्रान्त था पर आसाम के लोगों को कलकत्ता उच्च न्यायालय में आना पड़ता था जिसे आसाम के विषय में अपीलाधिकार थे। आसाम में कोई विश्वविद्यालय नहीं था और कोई विशेष विषयों के महाविद्यालय भी नहीं थे। फिर भी पंचाट के अधीन उसे केवल 30 लाख मिलते थे जबकि उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त को अविकसित प्रान्त होने के आधार पर एक करोड़ रुपये मिलते थे। सिंध को उस पंचाट के अधीन 1 करोड़ दस लाख रुपये मिलते थे। यद्यपि भारत के बड़े प्रांतों में आसाम सबसे अधिक अविकसित था। जहां नागरिक अथवा सभ्य प्रशासन की सुविधायें नहीं थीं और

वहां लगभग सामाजिक सेवाओं का अभाव था, पर पंचाट में उसे केवल 30 लाख रुपये की तुच्छ राशि दी गई।

श्रीमान्, मैंने आरम्भ में कहा था कि केन्द्र और प्रान्तों के बीच राजस्व का वितरण बहुत अवैज्ञानिक सिद्धान्त पर किया गया है। मैं जो युक्तियां देना चाहता हूं उनमें से एक यह है इस प्रकार का वित्तीय हिसाब लगाते समय आपको केवल पिछड़े हुए प्रान्तों की आवश्यकताओं पर ही ध्यान नहीं देना चाहिये, पर न्याय के सिद्धान्तों पर भी ध्यान देना चाहिये। विद्यमान वस्तु-स्थिति में इस बात की उपेक्षा नहीं कर देनी चाहिये कि आसाम संघीय राजस्व का बहुत बड़ा भाग दे रहा है। इसके अतिरिक्त सीमान्त प्रदेशों की विशेष स्थिति का भी समुचित ध्यान रखना चाहिये। यह तो सुनिश्चित रूप से अखिल भारतीय राष्ट्रीय हित का प्रश्न है। यह तो केन्द्र के हित की ही बात है कि आसाम में कार्यकुशल और अच्छा शासन सुनिश्चित रहे।

आसाम ने अपनी गरीबी के बावजूद भी यथासम्भव करारोपण करके अपनी सहायता अपने आप करनी चाही है। जैसाकि श्रीयुत रोहिणी कुमार चौधरी ने कहा है, आसाम ने कृषि आय पर 1938 में ही कर लगा दिया था, जूए पर और विनोद पर कर तथा मोटर गाड़ियों, मोटर तेल और चिकनाई वाले पदार्थों पर भारी कर लगा दिया तथा कारोबार और व्यापार पर कर तथा सामान पर बिक्री कर लगा दिया। इतना होने पर भी वह अपने आय-व्ययक को संतुलित नहीं कर सका है। जैसाकि उस दिन हमारे प्रधान मंत्री ने कहा था चालू आय-व्ययक में हमारे सामने एक करोड़ का घाटा है। मैं साहस करके कह सकता हूं कि 1 करोड़ का घाटा तो कम का ही अनुमान है। क्योंकि आसाम विधान-मंडल में बजट के वाद-विवाद के समय मैंने आय-व्ययक के अनुमानों तथा ज्ञापन में से तथ्यों और आंकड़ों का उदाहरण देकर सिद्ध किया था कि घाटा 2½ करोड़ के लगभग है। वित्त मंत्री ने आय-व्ययक के व्यापक वाद-विवाद का उत्तर देते समय मेरे कथन को गलत नहीं बताया।

श्रीमान्, आसाम का राजस्व 5 करोड़ है जिसमें 30 लाख रुपये सहायता के, 14 लाख पटसन शुल्क के तथा 40 लाख आयकर में उसके भाग के भी समाविष्ट हैं। उसे दो करोड़ का तो घाटा रहेगा ही, शायद 2½ करोड़ का हो जाये। आसाम के वर्तमान प्रशासन ने, इस आशा से कि भारत सरकार लगभग दस वर्ष तक विकास-कोष में से अनुदान देते रहने का अपना वचन पूरा करेगी, कई आवश्यक निकाय बनाना आरम्भ कर दिया जैसे कि उच्च न्यायालय, चिकित्सा महाविद्यालय, वन विद्यालय और कृषि विद्यालय। इस विकास-कोष में से अनुदान बंद होने वाले हैं और आसाम के सामने अपनी कुल आय में से तीन-चार करोड़ के घाटे की कठिन सम्भावना है क्योंकि इन नये निकायों के आवर्तक व्यय का भार उस पर आ पड़ा है। मैं संविधान-सभा के माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे इस प्रार्थना का समर्थन करें—मैं 'दावे' शब्द का प्रयोग नहीं करना चाहता—कि आसाम को नयी परिस्थितियों में न्याय मिले।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं जानना चाहता हूं कि आदिमजातीय लोगों का जीवनस्तर ऊंचा उठाने के लिए अधिक अनुदानों की मांग की जा रही है, या आसाम की

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

जनता की सुख सुविधाओं को बढ़ाने तथा विशेष विषयों के विद्यालय खोलने के लिए अधिक अनुदान मांगे जा रहे हैं।

***सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** मुझे प्रसन्नता है कि मेरे मित्र ने बाधा डाली है। मैं आदिमजातीय क्षेत्रों के विषय में जो तर्क पेश करना चाहता था उससे विषयान्तर हो गया। वे अनुच्छेद 255 का जो निर्वचन करना चाहते हैं वह गलत है। इसमें लिखा है "ऐसी राशियां, जो संसद् विधि द्वारा उपबंधित करे, उन राज्यों के राजस्वों के सहायक अनुदान के रूप में प्रति वर्ष भारत को संचित निधि पर भारित होंगी जिन राज्यों के विषय में संसद् यह निर्धारित करे कि उन्हें सहायता की आवश्यकता है, तथा भिन्न-भिन्न राज्यों के लिये भिन्न-भिन्न राशियां नियत की जा सकेंगी"। शब्द ये हैं "राज्यों को सहायक-अनुदान उपबंधित करना।"

मैंने आसाम की धरातल-रचना और भूगोल और वित्तीय स्थिति का व्यापक चित्रण कर दिया हैं। मैं समझता हूं कि भारत में कहीं भी राजनैतिक संस्थाओं अथवा राजनैतिक क्षेत्रों की इतनी विभिन्न श्रेणियां नहीं हैं जितनी कि आसाम में हैं। सर्वप्रथम हमारे यहां प्रशासित क्षेत्र हैं, जो हम 'समाविष्ट' क्षेत्र भी कह देते हैं, अर्थात वह क्षेत्र जो प्रान्त की विधान-सभा के क्षेत्राधिकार में आता है। फिर एक 'अंशतः अपवर्जित क्षेत्र' है, वे तीन पर्वतीय क्षेत्र हैं जिन्हें स्थानीय विधान-मंडल में अपने प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया है, किन्तु उस विधान-मंडल का साधारण विधान पर लागू नहीं होगा, जब तक कि राज्यपाल उसके लिए स्वीकृति न दे। फिर एक तीसरी श्रेणी है, "पूर्णतः अपवर्जित" क्षेत्र। इन अपवर्जित क्षेत्रों को स्थानीय विधान-मंडल में प्रतिनिधित्व का अधिकार नहीं है; किन्तु आसाम प्रान्त को इन क्षेत्रों का भार वहन करना पड़ता है, जबकि उनसे कोई आय नहीं होती। उदाहरण के लिए नागा पहाड़ियों को लीजिये, जो लगभग 4 हजार वर्ग मील का क्षेत्र है, जिसकी जनसंख्या प्रशासित क्षेत्र में लगभग दो लाख है तथा अप्रशासित क्षेत्र में लगभग डेढ़ लाख है। इस क्षेत्र में हमें लगभग दो लाख की आय है क्योंकि उस क्षेत्र में एक ब्रिटिश व्यापार संस्था के पास एक कोयले की खान है। यह कोयले की खानों की कुल आय है। वे पहाड़ी लोग कोई भू-लगान नहीं देते। वे कहते हैं "यह भूमि हमारी है"। उनके मुखिया को भी उन पर कर लगाने का अधिकार नहीं है। यदि आप लगान लगाना चाहें तो वे विद्रोह कर देंगे। यद्यपि इस क्षेत्र से केवल दो लाख की आय होती है, पर प्रान्तीय आय-व्ययक से नागा पहाड़ियों के प्रशासन पर लगभग 13 लाख रुपये व्यय करने पड़ते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** कितने?

***सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** लगभग तेरह लाख।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** उनकी वन-सम्पति का क्या होता है?

***श्री मुहम्मद सादुल्लाः** वहां बहुत ही कम संचार साधन हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** वहां आलू भी होता है।

***सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** उस क्षेत्र में आलू नहीं होता, खासी की पहाड़ियों में होता है। इससे पता लगता है कि हमें इन अपवर्जित क्षेत्रों पर कितना रुपया व्यय करना पड़ता है। फिर आसाम में एक और प्रकार का क्षेत्र है जिसे 'सीमान्त क्षेत्र' कहते थे पर अब उसे 'उत्तर पूर्वी सीमान्त अभिकरण क्षेत्र' कहते हैं। इन क्षेत्रों को राज्यपाल भारत के गवर्नर-जनरल के अभिकर्ता के रूप में प्रशासित कर रहा है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगारः** (मद्रास : जनरल): क्या मैं जान सकता हूं कि माननीय सदस्य संशोधन का समर्थन कर रहे हैं या विरोध कर रहे हैं। हम यहां से उनके तर्कों को समझने में असमर्थ हैं।

***सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** मुझे इन सब तथ्यों को सदन के समक्ष रखना है। हमारी आय केवल पांच करोड़ रुपये है जबकि हमारा क्षेत्रफल 1 लाख वर्ग मील है। इस आय से हम इस सीमान्त प्रान्त में अच्छा प्रशासन स्थापित नहीं कर सकते क्योंकि वहां हालत ही ऐसी है जो कि मैं बता चुका हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगारः** उनके ठोस सुझाव क्या हैं?

***सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** मैं पहले ही स्थिति को स्पष्ट कर चुका हूं। अतः हम इसी अनिवार्य निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि केन्द्र को सहायक-अनुदानों के द्वारा हमारी सहायता करनी चाहिये और इस अनुच्छेद 255 में ऐसी सहायता की चर्चा है। पर इस अनुच्छेद को पढ़कर जो जरा सी आशा किरण थी वह भी इस बात से नष्ट हो गई है कि सब कुछ विनिश्चय करना संसद् पर छोड़ दिया गया है। अब हमने इस सदन के आंगन पर मस्विदा-समिति के सभापति से दो बार सुना है कि यदि हम प्रान्तों को निर्यात-शुल्क का प्रतिशत भाग देने का प्रश्न संसद् पर छोड़ दें तो विविध प्रान्तों में ऐसा झगड़ा होगा कि यह काम राष्ट्रपति पर छोड़ देना अधिक अच्छा रहेगा। दुर्भाग्य से मेरे मित्र, रेवरेण्ड निकलस राय आसाम वालों ने आज सवेरे जो संशोधन भेजा था उसे अध्यक्ष ने पेश नहीं होने दिया है क्योंकि वह बहुत देर में आया था। अब श्री अनन्तशयनम् आयंगार जैसे मित्र कहते हैं "आप केन्द्र के पास भीख की झोली लेकर आते हैं उससे पहले आप अपनी सहायता स्वयं करिये"। मैं पहले ही सिद्ध कर चुका हूं कि आसाम के लोगों ने अपने आप पर यथासम्भव अधिकतम कर लगा लिये हैं, किन्तु फिर भी उससे प्रान्त की स्थिति नहीं संभलती। मैं पहले ही कह चुका हूं कि इस समय प्रान्त की कुल जनसंख्या 73 लाख है, जिसमें से 10 लाख चाय-बगानों के श्रमजीवी हैं, जिनका प्रान्त में कोई निहित हित या भूमि नहीं है। वे प्रान्त के राजस्व में एक धेला भी नहीं देते, सिवाय इसके कि वे कभी-कभी देशी शराब की दुकानों पर जाते हैं, किन्तु उन लोगों को अपने घर पर ही चावल की खराब खींचने की आदत है। अभी तक, दो जिलों में स्थायी रूप से जमे हुए जमींदारी क्षेत्र थे। स्थानीय विधान-सभा के पिछले सत्र में ही हमने आसाम में जमींदारी समाप्त करने का अधिनियम पारित किया था, पर मेरे प्रयोजन के लिए इतना ही कहना

[सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

पर्याप्त है कि इन दो जिलों में 15 लाख लोग रहते हैं। वे लोग सीधे प्रान्तीय राजस्व में कुछ भी अंशदान नहीं करते। अतः हम जो भी कर लगाते हैं वह प्रान्त के पांच छह जिलों पर ही पड़ता है और इन छह जिलों की कुल जनसंख्या 50 लाख से कम है, सचमुच उन पर बहुत भार पड़ता है।

श्रीमान्, यह कहा गया है कि एक वित्त-आयोग बनेगा जो इन सब मामलों पर विचार करेगा और हमें निराश अथवा हताश नहीं होना चाहिये कि वह प्राधिकारी न्यायपूर्ण विनिश्चय नहीं करेगा। किन्तु मेरे विगत अनुभव से मुझे बहुत संदेह होता है कि ऐसा कोई निकाय आसाम की विशेष स्थिति को समझेगा या उस पर ध्यान देगा, जब तक कि उस समिति या आयोग में ऐसा कोई व्यक्ति न हो जो आसाम की विशेष स्थिति से सम्बद्ध हो या सुपरिचित हो। मैं एक छोटा सा उदाहरण देता हूं। दो वर्ष पूर्व केन्द्रीय आयव्ययक को संतुलित करने के लिए केन्द्रीय वित्त-विभाग के किसी बुद्धिमान् अधिकारी ने सुपारी पर कर लगाने का विचार किया और वह विनिश्चय सारे भारत के लिए एक रूप था, और आसाम की हालत न जानने के कारण गरीब आसाम पर पांच लाख रुपये कर लगा दिया गया। समस्त भारत में तो सूखी सुपारी खाई जाती है और बाजार में बिकती है पर केवल आसाम में कच्ची सुपारी खाई जाती है। वह छिलके के साथ बिकती है, जो काफी मोटा होता है और छिलके के अन्दर रस वाला भारी पदार्थ होता है। कर सेरों के हिसाब से लगाया गया था और सूखी सुपारी तो सेर में 115, 120 चढ़ती हैं पर कच्ची आसामी सुपारी, जिसे 'ताम्बूल' कहते हैं, सेर में 20 ही चढ़ती है। परिणाम यह हुआ कि गरीब आसामी कृषक को, जो अपने घर के प्रयोग के लिए सुपारी के थोड़े से वृक्ष उगाता था, शेष भारत से तीन-चार गुना अधिक कर देना पड़ता था। आसाम की फिर वही हालत होगी, यदि कोई ऐसा व्यक्ति वित्त-आयोग में नहीं लिया गया जो आसाम की हालत से सुपरिचित हो या आसाम की हालत को समझता हो।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** आपने यह नहीं बताया कि आप कितने अनुदान चाहते हैं। आपके ठोस सुझाव क्या हैं?

***सैयद मुहम्मद सादुल्लाः** वास्तव में मस्विदा-समिति भी आपको प्रतिशत भाग नहीं बता सकती। मैं तो केवल यहीं कह सकता हूं कि मैंने आपके समक्ष आपके अत्यन्त सहानुभूति पूर्ण तथा न्यायपूर्ण विचार के लिए और केन्द्रीय सरकार को उचित सिफारिश करने के लिए लिये सब तथ्य रख दिये हैं।

***अध्यक्षः** मुझे अभी श्री सादुल्ला की वक्तृता से पता लगा है कि श्री निकलस राय ने एक संशोधन की सूचना दी थी। वह ठीक उसी समय प्राप्त हुआ था जब हम कार्यारम्भ करने जा रहे थे और इसलिये सदस्यों को भेजने के लिये उसकी प्रतियां तैयार नहीं हो सकीं। यदि श्री निकलस राय अपने संशोधन को पेश करना चाहते हैं तो मैं उन्हें इस समय भी उसको पेश करने की अनुमति दे सकता हूं।

***माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय:** अध्यक्ष महोदय, जब मैंने वित्तीय उपबन्धों सम्बन्धी विभिन्न अनुच्छेदों को पढ़ा तो मैंने अनुभव किया कि यह आवश्यक है कि मैं अनुच्छेद 255 पर यह संशोधन पेश करूं:

"कि संशोधन सूची के संशोधन संख्या 2917 के निर्देश से, अनुच्छेद 255 में 'Parliament may by law provide' इन शब्दों के पश्चात् 'or until Parliament thus provides, as may be prescribed by the President' ये शब्द जोड़ दिये जायें; और अन्त में निम्नलिखित व्याख्या जोड़ दी जाये:

'व्याख्या—'विहित' शब्द का वही अर्थ है जो अनुच्छेद 251 (4) (ख) में है।' "

मेरे द्वारा संशोधित अनुच्छेद इस प्रकार बन जायेगा:—

"Such sums, as Parliament may by law provide or until Parliament thus provides, as may be prescribed by the President, shall be charged on the revenues of India in each year as grants-in-aid of the revenues of such States as Parliament may determine to be in need of assistance, and different sums may be fixed for different States:"

इस संशोधन को पेश करने के कारण सुस्पष्ट हैं। इस अनुच्छेद 255 के अनुसार प्रान्तों को सहायक-अनुदानों का वितरण संसद् में पारित होना आवश्यक है और जैसा कि डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं कहा है जब ऐसी राशियां संसद् में पेश होंगी तब इसमें बहुत समय लगेगा तथा प्रान्तों में खींचातानी होगी क्योंकि प्रत्येक प्रान्त डोरियों को यथासम्भव बलपूर्वक खींचेगा और अपने लिये यथासम्भव अधिक भाग प्राप्त करना चाहेगा। मुझे विश्वास है कि छोटे प्रान्तों को तात्कालिक सहायता देने में, जो कि उनके लिये आवश्यक है, कुछ समय लग ही जायेगा; और आसाम, बिहार तथा उड़ीसा के प्रान्तों को तात्कालिक सहायता की आवश्यकता है, और राष्ट्रपति या भारत सरकार के लिये ऐसी सहायता देना असंभव हो जायेगा, जब तक कि राष्ट्रपति को ऐसा करने की शक्ति न दी जाये। अत: मैंने निम्न शब्द प्रविष्ट किये हैं "or, until Parliament thus provides, as may be prescribed by the President (अथवा, जब तक संसद् ऐसा उपबन्ध न करे तब तक जैसे राष्ट्रपति द्वारा विहित हो)"। अत: राष्ट्रपति को शक्ति होगी कि वह आदेश द्वारा उन प्रान्तों के लिये, जिन्हें आवश्यकता हो, कुछ राशियां विहित कर दे और वित्त-आयोग की सिफारिशों पर भी कार्य करे। श्रीमान्, मेरे विचार में यह संशोधन अत्यावश्यक है। मैंने अनुभव किया कि सदन को इस पर विचार करना चाहिये और मेरे विचार में यदि यह शक्ति राष्ट्रपति को नहीं दी जायेगी तो आसाम जैसे प्रान्त अत्यन्त कठिनाई में पड़ जायेंगे, वित्तीय गड़बड़ निश्चय ही हो जायेगी, और इस प्रकार हमारा कार्य नहीं चल सकता। यह निश्चय है कि यदि आसाम में गड़बड़ होगी तो सारे भारत में प्रभाव पड़ेगा और इस पर मेरे माननीय मित्र सैयद मुहम्मद सादुल्ला ने जोर दिया है तथा मेरे माननीय मित्र श्री रोहिणी कुमार चौधरी और शुक्रवार

[माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय]

को आसाम के प्रधान मंत्री ने भी और प्रत्येक वक्ता ने जोर दिया है। यह अत्यावश्यक है कि वित्तीय सहायता आसाम प्रान्त को तत्काल देनी चाहिये और वह अनुच्छेद 255 के अधीन नहीं हो सकता जैसाकि वह इस समय है। अत: राष्ट्रपति को शक्ति देनी चाहिये कि वह उन प्रान्तों को तत्काल सहायता दे सके जिन्हें आवश्यकता है। यह संशोधन बहुत-बहुत आवश्यक है और मैं नहीं समझता कि सदन अनुच्छेद 255 को इस सुझाव पर विचार किये बिना कैसे पारित कर सकता है। मुझे आशा है, श्रीमान्, यह सदन आसाम में गड़बड़ होने देकर आत्मघात नहीं करेगा, उससे सारे भारत पर प्रभाव पड़ेगा; और मुझे आशा है कि मैंने जो संशोधन पेश किया है उस पर विचार करते समय इस बात का ध्यान रखा जायेगा।

***अध्यक्ष:** अब सदन कल प्रात:काल के नौ बजे तक के लिए स्थगित रहेगा।

इसके पश्चात् सभा मंगलवार, 9 अगस्त 1949 के 9 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।